॥ श्रीगणेशायनमः ॥

पुरुषपरीक्षा ॥

अथ मिथिलायां जरइलतप्पान्तर्गत
विसपीग्रामवास्तव्येन महामहोपाध्याय कविविद्यापतिनाविरचितः
पुरुषपरीक्षानामग्रन्थो नितिविषयो
ऽयमिति ।

विविधविरुदावलीविराजमानमानोन्नत
महाराजाधिराज श्री ५ मल्लक्ष्मीश्वरसिंहवहादुर
के. सी. आई. ई. देवदेवानां सदासमरविजयिनामाज्ञयासुद्रितश्च ।

श्रीचन्द्रकविमित्रेण पवित्रेण यशस्विना ।
शोधितश्चार्क्कविप्रेन श्रीमत्सुखनशर्म्मणा ॥

॥ दोहा ॥

अम्बरमहिवसुशशिमिते शकेनभस्ये मासि ।
शुक्ले षष्ठ्यां मुद्रणा त्पूर्णो दिवसे मासि ॥

राज दरभंगा यन्त्रालये श्रीकृष्णधन मोजुमदार द्वारा मुद्रितः ।
शाके १८१० सन १२९६ साल

विज्ञापन ॥

यह पुरुष परीक्षा नाम ग्रन्थका यह तात्पर्य्यहै जिससे वीर आदि पुरुष पहचाने जातेहैं औउत्तमअधम पुरुषका लक्षण औ उदाहरण कथाहै मिथिलाभाषामें संस्कृत शब्दका गद्य औपद्यका अनुवादभी कियागया है यद्यपि मिथिलाभाषा प्राकृतसूत्र बालमीककृत औ वररुचिकृत इत्यादिसे परिशुद्धहै औ मैथिल देशमें चारपांच प्रकार प्राकृत प्रचलितथा तथापि कालानुसार भाषा विचार वर्त्तमान प्रचारही से किया गयाहै श्रीहलो झा हरिनगर निवासी वैयाकरण महाशय मिथिलाभाषा व्याकरण बनायाहै छपाहैनही मिथिला भाषा अन्यदेशीलोक से परिशुद्ध बोल नही होताहै कहाहै ।

भाषायँदन्यदेशीयो मिथिलाया वदेत्सदा ।
पीतमिच्छाकपोतेन समस्तं वारिधेर्ज्जलम् ॥१

अर्थयहहै मिथिलाभाषा औरदेशवालेजो परिशुद्ध बोलै तब यहभी संभवहै जोईसा मत्सका बच्चा समुद्रजल निशेष पान करजाय ॥१

यहदेशमें प्राचीन पण्डित लोक संस्कृत गद्य औपद्यबनातेथे भाषामें निरादर बुद्धिसे कोइबड़ा पुस्तकनही बनाया औ राजा लोकभी केवल संस्कृतविद्या विशेष जानतेथे केतनेभाषा उच्चारणभीनही करतेथे अब श्री ५ मान मिथिलेश महाराज लक्ष्मीश्वरसिंह बहादुर अनेक भाषोपभाषा संस्कृत प्राकृतविज्ञ वर्त्तमान विराजमानहै नियतनियममें एकयहभी नियमहै जो प्रति सोमवारको पण्डित सभामें आपभी सुशोभित होतेहैं न्यायमें कुसुमाञ्जलि द्रव्यगुणकिरणावली वर्द्धमान पदवाक्यरत्नाकर इत्यादि ग्रन्थविचार शास्त्रार्थ श्रवणकरते है व्याकरणमे पदार्थ सार भाष्य औ वागीशउपाध्यायकृत विभक्त्यर्थनिर्णयनामग्रन्थमें बहुतआदर रखतेहैं औ वेदान्त उपनिषद विचारभीहोता हैकोइसमयरघुदेवसरस्वती औ चन्द्रदत्तझा कृत विरुदावली संस्कृतअकविलोकसे सुनतेहैं अभिप्राय महाराज बहादुरका यहहैप्राचीन ग्रन्थ न्याय व्याकरण मीमांसा आदि प्राचीन मैथिलकृतग्रन्थ संग्रहहोय। औ प्राचीन रीति से पठन पाठन होय। ज्योतिष मैं पुरानाग्रन्थदीपिका जो वाचस्पतिमिश्र औ भवनाथजगद्गुरुप्रसिद्ध अयाची दूवेमिश्र औ शंकरमिश्र श्रीदत्तउपाध्याय आदि धर्म्मशास्त्रमें प्रमाणलिखाहै जो दक्षिणात्य गौडवंगाली लोकभीप्रमाणसे धर्म्मशास्त्रमें उपन्यासकियाहै सो रघुदेव सरस्वतीकृतटीका सहित संगृहीत किया है। यह दीपिका अति प्राचीन मैथिल महौतापनीय महामहे.पाध्याय श्रीनिवासमिश्रकृत है औ गोविन्दमिश्र औ भवनाथमिश्र शंकरमिश्र औ कविशिरोमणि रामदासझा गोविन्ददासझा औ उमापतिउपाध्याय औ रमापतिउपाध्याय इत्यादि अनेक मैथिल सुकविकृत नाटक । औ महानाटक गोकुलनाथ

उपाध्यायकृत आनन्दामृतनाम संग्रहीत है औ भानाझा औ हर्षनाथझा महाशय औ कविचन्द्रकृत संस्कृत प्राकृत जो काव्य नाटक प्रहसनआदि मैथिल पण्डित लोकका मुद्रित नही भयाहै वहभी मुद्रित होकर अधिकारी लोकको दियाजायगा जैसा यह पुरुषपरीक्षा भाषानुवाद सहित महाराज बहादुरके आज्ञानुसारसे छपाहै विद्यावान नीतिकथा रसिक को दिया जायगा औ कविचन्द्रकृतमिथिला भाषामें रामायण तयारहै छापाखानेमें छापाहोनेकोदिया जायगा वह भी थोडेदिनकेबाद मुद्रित होकर राज्यहै विज्ञपुरुषको दियाजायगा काव्यनाटक संस्कृत प्राकृत जो मैथिलकृत है अनेकग्रन्थ संग्रह भया है नाम राज पण्डित लोकसे लक्ष्मीश्वरविलास रक्खा गयाहै काव्यनाटक संग्रह करने में मैथिलश्रीकविचन्द्र नियोजितभयेहै कविविद्यापतिकृतगीतावली देशान्तरमें छपने में अशुद्धबहुत होगयाहै वहभी परिशोधितहोकर छपैगा। औ और भी उत्तम २ गीत संगृहीत है सोभी मिला दिया जायगा॥

विषय।

राजा पारावार सद्बुद्धिनामा मुनिसैं पूछा हे मुनि मेरा पद्मावती कन्या विवाह योग्य हुई कौन सोग्य वरको कन्यादूं। मुनि कहा पुरुष को देना फिर राजा कहा कहीं अ पुरुषभी वर सम्भव होता मुनि कहा पुरुष वही है जो वीरआदि गुणवाले होते हैं। उदाहरण दिया हैं राजा वलाह सब रात निशाभाग मैं मशान मे तपत तेल कराह मैं गिरता था भगवती चामुण्डा वलाह का सुसिद्ध मास खाती थी फेर जिला देती थी तृप्त होय वर मांग यह कहती थी राजा वर मांगता था यह हमारे दरवाजे पर सोने का मन्दिर रातही मे वनजावै तैसा होने पर राजा सवेर सुवर्ण काट काट दरिद्र भिक्षुक को बांट देताथा विक्रमादित्य करुणासागर वहां पहुंच एक रात मैं वलाह जाने के पह लेही तप्ततेल कराह मैं गिरा देवी मास खाकर जबतक वर प्रदान करै फिर तप्त तेल कड़ाह मै गिरा वारवार साहस देख भगवती कहा रे विक्रमादित्य तुमको सर्व्व सिद्धि लाभ है कौन प्रयोजन से यह साहस करता वर मांग विक्रमादित्य वर मांगा माता वरमागताहूं वलाह को विना साहस से सुवर्ण मन्दिर सवदिन वनता रहै एही कथा. सार दानवीर का है।

शोरठा।

नृपति वलाह समान को दाता को साहसी।
विक्रम नृप मतिमान दाता दुखत्राता भयो॥ १॥

१ पृष्ट से ११ तक दानवीरकथा है।

अलाउद्दीनशाह वादशाह सिकार हरिनका खेलताथा जंगल मैं दूर सैं कनात सैं घेररखा था साथमैं एकवेगम मरहट्टिनी थीओ घोड़ा हरिन पर दौड़ाई हरिन कनात तरप निकला मरहट्टिनी वेगम साथ सिकार का घोड़ा वढाई जंगल मैं हरिन को भाला से मारा साथ मैं सेनापति महम्मुदशाह भी था सेनापतिको वेगम सम्भोग इच्छादिखला ई उरसैं सेनापति सम्भोग किया सम्भोग आरम्भ मैं एक वाघ दौड़ा विनाप्रयास तीरसैं सेनापति वाघको मारा जब लौटकर वेंगमसाथ सेनापति दिल्ली आया वादशाह रात मैं हसी वेंगम को गले लगाता था एक मुसा का आहट पाकर वादशाह चौंक उठा वेंगम हंसी वादशाह पूछा हसने का कौन अवसर मिला कहो ठीक वेंगम कही जब हजूर सैं अभयदान मिलेगा तब दो दिन के बाद कहूंगा। वेंगमने महमुद सेनापति को हुसिआर किया सेनापति कुटुम्ब समेत भागा हम्बीर राजाका शरण लिया जब मरहट्टिनी हाल कहा वादशाह कोप कर हम्बीर राजाका किला घेरा हम्बीरदेव जब तक जिता था सेनापति को दिया नहीं इतयादि कथा।

आरम्भ सूचीपत्र ॥

शुद्धाशुद्धि

पृष्ठ	पंक्ति	शुद्ध	अशुद्ध
१	३	स्सुधियां	स्सधयां
१	६	सुधाम्	स ुधाम
३	२	क्वचित्	क्कचित
३	१४	निर्णाय	मिर्णाय
३	१५	विभ्रम	विभ्रम
३	१६	अपुरुषो	अपरुषो
३	१८	वर	बर
६	७	संकुरित	संकरित
७	१७	तावत	तावत
८	२२	रज्जु	रज्वु
१०	५	दिव्युवाच	दिव्यवाच
१८	१७	तिथ्यभस्तात्	सुनिसिद्धतिथ्यां
२१	७	राजन्दृष्ट्वा	राजन्दष्ट्वा
२२	११	श्री मल्ल	श्री मल्ल
२३	१५	महावीर	हमावीर
२४	२२	रक्षोगणा	रक्षोमणा
२५	८	पतितन्दृष्ट्वा	पतितन्दष्ट्वा
२७	२१	दूनू	दून
३२	२	गतोक्ति	गतोक्ति
३३	१७	किञ्च	किञ्च
३४	४	रेरे	ररे
३४	८	लब्धश्रियः	लब्धश्रियः
३४	२२	मण्डलि	मण्डिलि
३६	४	ततःकियता	ततष्कियता
३७	५	भवताकृतः	भवताकृताः
३८	१०	स्थैर्य	स्थैय्य
४१	१	क्रियमाणाः	क्रियामाणः
४१	१	भीरुत्वन्दृष्ट्वा	भीरुत्वन्दष्ट्वा
४१	१४	सन्निहित	सन्निह्त
४१	१६	प्रकृति	प्रकति
४१	२१	भूमि	भमि

पृष्ठ	पंक्ति	शुद्ध	अशुद्ध
४२	२३	मन्त्री	मन्ती
४४	३	मुञ्चति	मुचति
४४	५	मकलाः	मकालो
४५	२	शकुला	श्रृला
४६	३	कृतवित्तः	कृतः
५१	१७	छोतो	छेतो
५३	१८	विश्वसाची	विश्वासाची
५३	३	बालकानेकं	बालकंमेकं
५६	२६	दृष्ट्वा	दाया
६०	१०	मारब्ध	मारब्धं
६३	२४	किम्वदन्ती	किम्वदन्ता
६४	२०	नखल	नवाल्हल
६८	२४	सम्मित	साम्मित
७१	१	क्रियतां	क्रीयतं
७४	५	सभुक्त	सभक्त
७७	१४	अंजन	शक्त
७७	१६	आखिमै	आंखिमै
७९	१४	करुणा	करुणा
८२	६	साध्यासिद्धौ	साध्यासाध्यौ
८३	३	करिष्यति	करिष्यति
८४	१७	प्रत्यपकार	प्रत्यकार
८५	२३	मन्त्रि	मन्ति
८५	२४	गुरु	गात्र
८६	२२	भूप	भूप
८७	२२	जानै	जान
८७	२४	मन्त्रि	मन्ति
८८	१२	मोष्टु	मोष्टु
८९	२२	वस्तुमै	वस्तुमे
८९	२४	पुष्कल	पूष्कल
९२	८	चिन्तयामास	चिन्त्तयामास
९३	२५	भेल	भूल
९६	१३	गंजन	भञ्जन
९७	१९	गाध्वर्व	गान्धार्व
९७	१८	पुराणां	पुराणां

पृष्ट	पंक्ति	शुद्ध	अशुद्ध
९९	१	यतः	यत
९९	१९	नद्धि	नुद्धि
१००	१४	कोटरस्थ	कोटस्थ
१०१	१५	पश्चात्	पाश्चात्
१०१	२१	उत्तरथि	उत्तारथि
१०६	४	दृष्ट्वा	दष्ट्वा
१०६	५	कीदृशः	कीदशः
१०८	११	राज्यमम्भोनिधेः	राज्यमाम्भोनिधेः
१०९	८	सत्याः	सत्यः
११०	१६	अनीति	अनीत
१११	१	व्याघ्र	व्याघ
१११	१५	दृतौ	दतौ
११२	१२	परीक्षोत्तीर्णां	परीक्षोर्त्तीणां
११५	४	परिवारै	परिवार
११५	२०	दृंखि	दृंहि
११७	१६	भषानुवाद	भषानुवाद
११८	१२	भाषानुवाद	भाषानुकाद
११९	१३	करणीय	करणाया
१२०	५	प्रवीणा	प्रविणी
१२४	८	निष्कण्ठकं	निःषठष्ककं
१२७	४	वत्स	वत्सु
१२७	४	शूलमारोपयथ	शूरमारोपथ
१२७	९	रक्षोनुरोधेन	रक्षानुरोधेन
१२८	८	खड्ग	खड्ग
१३४	२४	क्षोद्रकैनि	क्षोद्रकैनिह
१३७	२	गायनाकर्षुः	गायनाउचुः
१३९	१	स्वीकर्त्तव्या	स्वीकर्त्तव्यग
१४०	१	तालगर्भिणा	तालगर्व्भिणा
१४१	३	दृष्टिहेतुत्वञ्चेति	दष्टहेतुञ्चेति
१४१	४	दृष्टादृष्ट	दष्टादष्ट
१४१	२०	मन्त्री	मन्तो
१४२	३	जाया	त्तया
१४२	४	कथमेतादृशः	कथमेतादशः
१४२	८	सर्व्व श्रोभि	सर्व्व श्रोभिस

पृष्ट	पंक्ति	शुद्ध	अशुद्ध
१४२	९	छायाभिधानमंक्र	छायाभिधानःमंक्र
१४२	२२	राम	राभ
१४२	२४	धारश्च	धरश्च
१४२	२६	मुक्त	मर्क्त
१४४	१४	स्यमन्तक	स्यमन्तक
१४४	१७	धृतराष्ट्र	धृतरष्ट्र
१४४	१९	कदनं	कनं
१४४	२२	वाचस्पती	वातस्पती
१४५	७	राजा को	राजा को
१४५	१३	तुम्हारा	तमारा
१४६	४	भक्त	भक्ति
१४६	७	हरिमय	हरिभय
१४६	८	हरिप्रमय	हरिप्रभय
१४६	८	हरिप्रमय	हरिप्रभय
१४६	९	हरिप्रमय	हरिप्रभय
१४६	११	काव्यं	कव्यं
१४६	१४	अच्युत	अच्यु त
१५४	१४	वाढैक	वाठैक
१५५	३	नीच	नीञ
१५५	२२	स्वरूप	स्वरूय
१५५	२२	भूप	भूय
१५७	१	वाक्यो	वाक्यो
		विद्यां	विद्यां
		निन्दितं	नन्दितं
१५७	३	स्त्रियन्द्दष्ट्वा	स्त्रियन्द्दष्ट्वा
१५७	१२	मूर्ख	मर्ख
१५७	१५	सेमूर्ख	सेमर्ख
१५८	३	निरूप	रूप
१५८	८	व्युत्पन्न	वुत्पन्न
१५९	१३	मूर्खत्व	मूर्खत्व
		निर्धारितंसर्व्वै:	निर्धारितस्सर्वै:
१६०	७	अलङ्कृ	अलङ्क
१६०	८	न्दष्ट्वा	न्दष्ट्वा
१६१	१८	हरिपद	हरपदि

पृ	पंक्ति	शुद्ध	अशुद्ध
१६२	६	पुरुषा	परुषा
१६३	२१	पृथिवी	पृथिवि
१६५	२	वपतु	वपत
१६८	•	सोरठा	दोहा
१८३	११	योलयन	योल्यन
१८४	११	विश्वसितं	वीश्वसित
२००	१९	दृष्ट्वा	दष्ट्वा
२०२	७	वभाषे	वभाष
२०७	१२	कम्पित	कम्पि
२०९	८	गुणिन्यपि	गुणीन्यपि
२१३	२५	भूमि	भमि
२१४	२५	कर्वस्व	करस्व
२१६	९	दृष्ट्वै	भव्वै
२२०	११	गृह्यान्नोयमाना	गृह्वन्नीयमाना
२२१	१	मूलदेव उवाच	मूलदेव उवच
२२३	११	दूर	दर
२२३	१८	मृग	मग
२२९	५	प्राप्य	प्राम्य
२२९	१६	अपनै	अपमै
२३०	५	विस्तीर्णा	बिस्तीर्णा
२४०	१५	योगाभ्यास	योगाभ्यंस
२४८	३	दृष्ट:	दृष्ट
२४८	९	गर्भस्थइव	गर्भस्तइव
२४९	१३	लब्धा	लब्द
२५३	३	गजरथपुरात्	गजरथेत्यादि
२५३	८	प्रदत्तो तीयमेतेषां	प्रदत्तोतीयर्यमेतेषा
२५४	३	मद्भुतं	मद्भतं
२६३	२६	भवादित्य	भवोदित्य
१९३	९	क्रन्दनं	कन्दमं
१९५	१	क्रन्दतानु	कन्दतानु
१९५	१	नगराद्बहि	नगरावहि
२००	६	कारणं न	कारणं घ
२०५	१८	मरिजाएव	मरिजाएय
२०५	१३	अभिसारिका	अभिसरिका

॥ श्रीः ॥

पुरुषपरीक्षा १परिच्छेद ॥

श्रीगणेशायनमः । ब्रह्माऽपियाःनौति नुतस्सुरगणाढ्याँ मर्च्चि तौप्यर्च्चय तौन्दुमौलिः । या ध्यायति ध्यानगता ऽपि विष्णु स्ता मादिशक्तिं शिरसा प्रपद्ये ॥ १ ॥ वीरेषु मान्य स्सुधियां वरेण्यो विद्यावतामादि विलेखनीयः । श्रीदेवसिंहक्षितिपालसूनु र्ज्जीया चिरं श्रीशिवसिंहदेवः ॥२ शिशूनां सिद्ध्यर्थ नयपरिचिति र्नूतनधियां मुदे पौरस्त्रीणा मनसिजकलाकौतुकजुषाम । निदेशा न्निश्शङ्कं सदसि शिवसिंहक्षितिपते : कथानां प्रस्तावं विरचयति विद्यापतिकविः ॥ ३ ॥

मालिनीछन्द ।

पदयुगकमलेते आदिशक्ते प्रणम्य प्रणमदखिलदेवैसर्व्वदेयेजनानाम ।
अथपुरुषपरीक्षाशुद्धभाषानुवादं रचयतिकविचन्द्रक्षीरभुक्तोर्व्वदोभिः॥१

भाषानुवाद ।

वसन्ततिलका ।

जे देववन्दित विरचिमहेशविष्णु देवीकअर्च्चन करैछथि दुष्टकाज ।
से आदिशक्तिक प्रणाम सदा करैछी सर्व्वार्थसिद्धि जननी जननी क आज ॥२
जे मान्यवीर गण मध्य सुधीप्रधान तत्सूरिवर्ग पड़ आदिम नाम लेख ।
श्रीदेवसिंह अवनीपक पुत्र होथु आयुष्य युक्त चिरसे शिवसिंह लेख ॥३

हरिपद छन्द ।

शिशु नरमति का नय परिचय हो मनसिज कौतुक वाली ।
पर वनिता मन हर्ष हेतु कवि विद्यापति गुण शाली ।
श्रीशिवसिंह नृपति आज्ञा सों कथा ललित प्रस्ताव ।
विरचित कयल रसिक पण्डित जन मन मैं अति सुख पाव ॥४

नयानुरोधेन गुणेन वापि कथारसस्यापि कुतूहलेन । बधोपि वैदग्ध्यविशुद्धचेताः प्रबन्धमाकर्णयिता न किस्मै ॥ ४॥ पुरुषाः परिचीयन्ते युक्त्या रस्याः परीक्षया । तत्पूरुषपरीक्षायांकथा सर्व्व मनःप्रिया ॥५॥

आसी दासमुद्रक्षितिपतिसहस्रशिरोमालारञ्जोरंजितपादपद्मः । चन्द्रातपायाँ पुरि पारावारोनामराजा तस्य सर्व्वावयवसुन्दरी सर्व्वलक्षणसम्पूर्णा एका पद्मावतीनामकन्यकाबभूव तस्याः शैशवापगम मवलोक्य सराजा तदनुरूपं स्वकुलयोग्यं च वरमनुसन्दधानः सचिन्तो बभूव ॥

यतः। अव्यापारपराङ्मुखस्य विततन्यायाभ्युपात्तश्रियो भुञ्जानस्य सदैव पथ्य मरुजो रोषादिदोषद्विषः । योग्यायोग्यवरार्थनार्थनविधाव्यग्रतनाभंगभो श्चिन्ता मातनुते सतोपि हृदये स्वस्थस्यकन्यावतः ॥ ६ ॥

भाषानुवाद ॥

चौपाई ।

नय गुण भरल सरल भल बचन । कथा रसक सुकुतूहल रचन ॥
बुधजन मन दय कय सुनताह । कियक न हमर सुकृत गुणताह ॥
चोधि पुरुष परिचित एहि युक्ति । पुरुष परीक्षा में शुनि उक्ति ॥
पुरुष परिचा कथा मनोज्ञ । थिक पण्डित मन हर्षक योग्य ॥ ५ ॥

छलाकथि चन्द्रातपा नाम पुरी में पारावार नाम राजा तनिका सकलावयव सुन्दरी सर्व्व लक्षण सम्पूर्णा एक पद्मावती नाम कन्या छलीथिनि तनिक विवाह योग्य अवस्था देखि कुलानुरूप अपन कुल योग्य वर अन्वेषण में चिन्तित होइत भेलाह ।

चौपाई ॥

सदाचार न्याय सदृत्त । पथ्य सुभोजन निर्मल चित्त ।
रोषदोष पुनि हृदय न आव । सज्जनता गुण गणक स्वभाव ॥
योग्या योग्यक वरक विचार । अस्वर्थना संग व्यापार ॥
कन्यागत स्वस्थहु कां भीति । चिन्ता बाढय धर्म्म सुनीति ॥ ६ ॥

ततः किं करवाणीति सुबुद्धिनामानमृषिमपृच्छत तथाहि "नैकाकी निर्णयं कुर्य्यात् दिष्टे कृत्यविधौ क्वचित। सम्भवन्ति बुधस्यापि दोषाश्चैव विभ्रमादयः।७॥ राजोवाच। मुने ममेयं पद्मावती नाम कन्या विद्यते तत्कमेतस्यावरं करवाणीति विमृश्या दिशतु भवान्। मुनिरुवाच। राजन् पुरुषं वरं कुरु। राजोवाच। मुने कथमपुरुषोपि वरस्सम्भवति। मुनिरुवाच। पृथिव्यां बहवः पुरुषाः पुरुषाकाराश्चसन्ति तत्पुरुषाकारान् परित्यज्य पुरुषं वरयेति ब्रवीमि तथाहि। "लभ्यन्ते पुरुषाकाराः पुरुषः खलु दुर्लभः। वक्ष्यमाणेन चिह्नेन निखिलेनोपलक्षितः" ॥ ८ ॥ तद्यथा। "वीरःसुधीश्चविद्यश्च पुरुषः पुरुषार्थवान्। तदन्ये पुरुषाकाराः पशवः पुच्छवर्ज्जिताः" ॥ ९ ॥ राजोवाच। तत्र वीरादयः कथं परिचेतव्याः। मुनिरुवाच।

भाषानुवाद।

ततय की करव ई सुबुद्धि नामा ऋषि कां पुछइत भेलाह हेतु।

दोहा।

एकसर नहि निर्णय करी इष्ट कृत्य विधि जानि।
विभ्रमादि उतपन्न हो बुध जन मन सुख हानि ॥ ७ ॥

राजा कहल हे मुनि हमर ई पद्मावती नाम कन्या छथि हिनकर वर ककरा करव ई विचारि अपनैं कहल जाय। मुनि कहल हे राजा पुरुष वर करू। ई शुनि राजा पुनि कहल हे मुनि कतहु अपरुषो वर संभव छथि शुनि से पुनि मुनि कहल हे राजा पृथिवी मैं बहुत पुरुष ओ पुरुषाकार छथि तैं हेतु पुरुषाकार कां त्यागि पुरुष वर करू यहनहमर अभिप्राय देखू लेहन.।

चौपाई।

बहुत सुलभ थी पुरुषाकार। दुर्लभ विरल पुरुष संसार ॥
वीर सुधी विद्याक निकेत। सपुरुष सत्पुरुषार्थ समेत ॥
पुरुषाकार से यहिको आन। पुछ शृंग विनु पशुक समान ॥ ८ ॥

राजा पुछल मुनि कां वीर आदि पुरुष कोना परिचित होयताह। मुनि कहल सनमु जाय राजा।

"वीरश्शौर्य्यविवेकाभ्या मुत्साहेनच मण्डितः । मातापित्रो रलंकर्त्तुं कुले कुत्रापि जायते" ॥ १० ॥

शौर्य्यं कार्पण्यराहित्यं विवेको धी र्हिताहिते । क्रियाप्रवृत्तिरुत्साहो वीरस्तैस्तु भवेत्त्रिभिः ११॥ स चतुर्व्विधः दानवीरो दयावीरो युद्धवीर स्सत्यवीरश्चतथा । "दानवीरो हरिश्चन्द्रो दयावीर श्शिविर्नृपः । युद्धवीरो भवेत्पार्थ स्सत्यवीरो युधिष्ठिरः" ॥ १८॥ राजोवाच । मुने ते युगान्तर पुरुषा कलौ शिक्षाया मुपमानता स्वयान्ति । यतः । "कलौ शिक्षाहेतु र्न खलु कृतजातस्य चरितं क्रियायां दृष्टान्त स्समयकृतभेदो न घटते नसा बुद्धिः पुंसां नच वपुषि तेज स्तदधुना नवा सत्यं तादृक् कलिसमयसंजातनुषाम ॥ १३ ॥

भाषानुवाद ॥

चौपाई ।

शौर्य्य विवेकैं वीर कहाव । उत्साहें मण्डित निज भाव ॥
माय बाप का धन्य कहाय । उत्तम कुलमें जनमयि जाय ॥ ८ ॥

रूपमालाछन्द ॥

कृपणता सौं रहित हो से नाम शौर्य्य कहाव ।
हिताहित मति हो विवेक सेदोष जतय न याव ॥
क्रिया मध्य प्रवृत्ति हो उत्साह नाम विचार ।
वीर हो यहि तीनि सौं से वीर चारि प्रकार ॥ १०

से वीर चारि प्रकारक दानवीर १ दयावीर २ युद्धवीर ३ सत्यवीर ४ ॥

दोहा ॥

दानवीर हरिचन्द्र नृप दया वीर शिवि कर्म्म ।
युद्धवीर अर्ज्जुन ततय धर्म्म वीर हो धर्म्म ११ ॥ (युधिष्ठिर) ।

राजा कहल श्रो लोकनि युगान्तरक पुरुषक कलियुग शिक्षा विषय उपमानता नहि प्राप्त भय सकैछ हेतु ॥

दोहा ॥

कृत त्रेता द्वापर कलिक पुरुषन घट दृष्टान्त ।
नहि मति तेज न सत्य नहि कलियुग जात नितान्त ॥ १२

ततः कलिसमयसम्भूतानां भेदपुरुषाणांकथाभिः परिचाययतुमांवीरंभवान् मुनिरुवाच। "सत्ये त्रेतायुगेचैव द्वापरे भूभुजोन्वयः। कथितस्सूरिभिः पूर्व्वैः कथ्यतेच कलौ मया॥१४

तत्र प्रथमं दानवीरकथाताऽवत्प्रस्तूयते॥ यतः। "स्तुतिनोत्साहय्यमाणे न यत्ना दाक्षिणत्येन च। नाम्नापि दानवीरस्य शुभं सर्व्वत्र जायते॥१५॥ आसी दुज्जैनी नाम राजधानी तस्यां विक्रमादित्यो नाम राजा बभूव। सचैकदा सिंहासनोपविष्टः केनापि वैतालिकेन पठ्यमानं श्लोकमेकं शुश्राव॥ तद्यथा। "विप्रैस्सन्तुष्टचित्तैः प्रमुदितहृदयै र्व्वन्दिभिर्ल्लब्धकामै र्भृत्यैस्सिद्धाभिलाषै र्दिगवनिपतिभि र्व्वश्यता माश्रयद्भिः। विद्वत्साधैः कृतार्थै र्दिशि दिशि सुभटैः काञ्चनाभ्यर्च्यमानै र्न्नित्यं संस्तूयमान स्सजयति नृपति र्द्दानवीरो बलाङ्कः॥१६॥

भाषानुवाद।

तैं कलियुग संभव पुरुषक कथा सौं परिचय करवा योग्य जाय अपनें॥

दोहा॥

सत्य युगादिक नृप कथा कहल पूर्व्व मति मान॥
कलि में हम वर्णन करिय जेहनि मति जे आन॥१३

ताहि प्रथम दानवीरकथा प्रस्तावना करैछी।

दोहा।

स्मरण श्रवण गुण गण कथन वीर रसक लय नाम।
भव्य भव्य सज्जन कहथि शुभ दायक सभ ठाम॥१४॥

छलि उज्जैनी नामक राजधानी ताहि में विक्रमादित्य नामक राजा छलाह यो एक समय अपन सिंहासनस्थ भेला कोनो वैतालिक पठित श्लोक सुनल।

षटपदछन्द।

विप्र सतत सन्तुष्ट चित्त प्रमुदित बन्दी गण।
भृत्य प्राप्त अभिलाष दशोदिश वशि नृप परसन
पण्डित साथ कृतार्थ सुभट कांचन धन पावथि
होथु सदा जय युक्त जनिक यश सभ जन गावथि
दानवीर विख्यात महि महि तनि तुलना के करत
आइ बलाङ्क समान कत लोचन हम धारा धरत॥१५॥

ततो राजा पठन्तं वैतालिक मब्रवीत् । रे रे वैतालिक कस्तव नृपति र्व्वयसाहः । केनदर्पेण तस्योत्कर्षं मम पुरतः प्रस्तौषि ॥ वैतालिकउवाच ॥ देव मम वृत्तिरियं वैतालिकस्य यद्वीराणां यशः परितः प्रस्तूयते॥ तथाहि ॥ 'शूराग्निर्योधयति बोधयति प्रमत्तान् कीर्त्तिं विमोचयति कापुरुषान् कर्षोभिः । अहो विपश्चवचनं पुरतो नृपाणां वैतालिकः कृपणतां भियतेन याति १७॥

अतएव मया मर्थैः शूराः परितोषयन्ति अहञ्च तेषां मङ्कुरित यशः स्वर्ग्गंदिशः प्रतिदिशं पल्लवयामि । दैवो यदि तदाकर्णने सामर्ष स्तदा मदधिकं तदुपमंशा वितनोतु कुप्यतिकुतः । राजोवाच । किन्तत्पौरुषं वैतालिकः कथयति देव तस्य वल्लाहनाम्नो भूमिपते र्द्वारि प्रतिरात्रं मन्त्रिण एकं सौवर्ण मायतन मुत्पादयन्ति प्रतिदिनं तच्च दयित्वा सराजा सुवर्णानि ब्राह्मणेभ्यो गुणिभ्यो दरिद्रेभ्यश्चवितरति तद्दानपरितुष्टा स्तेसर्व्वे सर्व्वत स्तस्य गुण गाथां गायन्ति । राजोवाच । वैतालिक सत्य

भाषानुवाद ।

ततय राजा श्लोक पाठक वैतालिक कें कहल रे रे वैतालिक के तोर राजा बलाह कोन दर्पसों हुनक उत्कर्षक स्तुति हमरा आगां करैछें वैतालिक कहल हे महा राज हमर जाति वृत्ति ई थिक जे वीर पुरुषक सर्व्वत्र यशो गान करैछी ॥

रोलाछन्द।

शत्रनहि युद्ध कराव शूर कारयामहि मण्डन ।
पुनि उन्मत्त जगाव पुरुष कातरता खण्डन ॥
भूपति सभा निशंक प्राप्त भूपति यश गावै ।
वैतालिक मरिजाय कृपणता कां नहि पावै ॥ १८ ॥

अतएव हमरा शूरलोकनि धनदय सन्तोषित करयित छथि हमहु हुनका सभक यं कुरित यशोलता सभदिश पल्लवित करैछी राजा जौं से सुनलें अमर्ष युक्त तों तनिका सों अधिक तनिक अथवा तत विस्तार करथु क्रोधयुक्त कियक । राजा कहल को थोहि राजाक पौरुष वैतालिक कहल हे महाराज से बलाह नामक राजाक द्वार प्रतिराति मंत्री एक सुवर्ण मन्दिर निर्म्माण करै छथिनि से प्रति दिन काटि थो सुवर्ण राजा ब्राह्मणकां गुणिजनकां ओ दरिद्रकां वितरण करयि छथि । ओ दान सन्तुष्ठ सभ सभदिश त निकर गुण गानकरै छथि राजा पुछल वैतालिक सत्य ई कथा वैतालिक कहल मिथ्या क

मेतत् वैतालिकउवाच। राजन अतथ्यं के कथयन्ति यदिभवान्न प्रत्येति तदा स्वकीयेन चारपुरुषेण निरूपयतु। राजोवाच। वैतालिक यावदेत न्निरूपयामि तावत्त्वमिहैव नगरे तिष्ठ यदि तथ्य वाग्भविष्यसि तदा त्वां पूजयिष्यामि इत्यभिधाय वैतालिकं वहि: प्राहिणोत राजा चान्त: पुरं गत्वा रहस्य चिन्तयत अहो महदाश्चर्यं बलाहचरितं अथवा विधातु: प्रपञ्चे किमसम्भाव्यं तत्पश्यामि गत्वा कौतूहलमिदमिति परामृश्यराज्यधु रं सचिवेषु निवेश्य अग्निकोकिलनामानौ वेतालावाहूय तयो:स्कन्धमारु ह्य जगाम बलाहराजधानीम तत्रच सुभटवेषधारो राज्ञोबलाहस्य दर्शनं कृत्वा ऽब्रवीत। देव अशमसमरसाहसाङ्कस्य विक्रमादित्यस्य रा ज्ञो दौवारिकोहं भवत: : कीर्त्तिमाकर्ण्य भवन्तं सेवितुं आगतो स्मीत्य भिधाय प्रणनाम। राजोवाच। रे दौवारिक त्वं महतो महीपालस्य दौ वारिकोसि तन्ममापि द्वारमेवाधितिष्ठ॥

ततः प्रभृति विक्रमादित्यो द्वारि तिष्ठन परमाद्भुतं प्रत्यह मुत्पा द्यमानं सुवर्णायतनं तत्सुवर्णवितरणं चापश्यत ततश्चिन्तयामास कुत

भाषाअनुवाद।

या केञ्च जौं अपमै कां हमर कथा मै दृढ विश्वास नहि तो अपन दूत पुरुष द्वारा निश्चय कय लेल जाय औ बलाह जेहन। राजा कहल वैतालिक यावत ई कथाक हम निश्चय करी तावत् तों एतहि रहः ओं तों सत्यवक्ता हयवह तो तोश्वरा बहुत रत्नादि दय परितुष्ट करव ई कहि वैतालिक कां बाहर डेरा हेतु जाय कहल अपने महाराज विक्र मादित्य अन्तःपुर एकान्त विचार कयल अत्यन्त आश्चर्य बलाह चरित अथवा विधाताक सृष्टि में की आश्चर्य से जाय देखव दर्शनीय कौतुहल थिक ई विचारि राज्य कार्य्य भार मंत्रीलोक विषय सोंपि अग्नि औ कोकिल नाम वेताल कां बजाय तनिक कान्ध चढि गेलाह राजा बलाह राजधानी। ततय सुभट वेषधारी राजा बलाहक दर्शन कयल कहल हे राजा अशम समर साहसांक विक्रमादित्य राजाक हम द्वारपाल थिकहु अपनेक कीर्त्ति सुनि २ अपनेक सेवा करबक मनोरथसौं एतय आयलछी ईकहि प्रणाम करइत भेलाह राजा बलाह कहल रे द्वार पाल तों बड़ा महाराजक द्वारपाल छैं हम रो द्वारमें रहगय॥

ततय ताहि दिनसौं विक्रमादित्य द्वारपररहि परमअद्भुत प्रतिदिन उत्पन्न सुवर्ण गृह ताहि सुवर्णगृह दानो सुनि देखल ततमनमें चिन्ताकयल अतयसौ हिनका सुवर्ण मंदिर

एवास्य सुवर्णायतनं कुतो मम नास्ति पुरुषश्चकं व्यापारं पुरुषेणानो दासितव्यं कारणं मवनिरूपयितुं युज्यते तत स्तत्कारणं जिज्ञासुरभवत् एकदा तु राज्ञो महानिशाभागे सकलेषु पुरजनेषु राजपरिजनेषु च प्रसुप्तेषु प्रासादादेकाकिनं निःसरन्तं नगराद्बहिर्भवन्तं बलाहन्ददर्श दृष्ट्वा च निभृतक्रमेण तेनाऽलक्षितः तदनुगमनपरायणो बभूव बलाहस्तु नदीतीरे नृत्यद्वेतालपदास्फालसातङ्कडाकिडमरुडात्कारफेरवीरुहस्वहुङ्कारसरभसराक्षसक्रीडाक्रूरितं नरकपालकडारचितांगारचिह्नितंपरमभयानकं श्मशानदेशमाजगाम तत्र नद्यां कृतस्नानो भैरवपुरुषैश्चर्मरज्जुभिर्बद्धः प्रज्वलानलसन्तप्ततैलपूर्णकटाहे निःक्षिप्तश्च सतत महतीं वेदना मनुभवन् महाकष्टेन प्राणांस्त्याज तद्दत्यक्तप्राणस्य तैलसुसिद्धानि मांसानि भगवत्या चामुण्डया प्रत्यक्षी भूय खादितानि भक्षितमांसा च भगवती परमपरितुष्टा तदस्थीन्य मृतेन सिक्त्वा तं पुनस्तथैव ससृज्जं सहृष्टो बलाहः पुनरुत्थाय भगवतीं प्रणनाम वरञ्च वव्रे । बलाह उवाच । भगवति वदान्यतया संभावितस्य पुरुष

भाषानुवाद ।

थोड़क हमरा नहि कियक पुरुषसाध्यकर्म्म मे पुरुषकाउदासीन मन नहि कर्त्तव्य कारण एहि ठाम जानकचाही ततय ताहि कारणक जिज्ञासपर भेलाह एहिमे एकदिन विचारकयल थाइ रात्रिचरित्र देखब निशाभागमे पुरजन नृपपरिजन सुखसुतलमे अपना प्रासादसौं बहरायल नगर बाहर भेल बलाहका देखि अपनहुं क्रम २ प्रछन्न विक्रमादित्य तनि कर पाछु २ जाइत भेलाह बलाह राजा नदी तीर नचइत वेतालचरणशब्द चकित डाकिनी डामरु डिमडिम शृगालो सहस्र फेत्कार धनि सभय सहित राक्षस क्रीडा क्रूर नरकपाल कडार चिता अनल चिह्नित अत्यन्त भयानक श्मशान देश जाइत भेलाह । ताहि नदीमे स्नान कयलनि पश्चात भैरवपुरुषसौं नरचर्म रज्जुसौं बान्धल सन्तप्त तेल पूर्ण कराहमे निःक्षिप्त भेलाह सेततय महावेदना अनुभव करयित महाकष्टसौं प्राण त्याग कयलनि तैल सुसिद्ध तनिक मांस भगवती चामुण्डा प्रत्यक्षा भय खयलनि भोजन सौं परम सन्तुष्टा भगवती हुनक अस्थि एकठाम कय अमृतसौं सिक्तकयल पुनि तेहने राजा बलाहक शरीर कय देल बलाह पुनि उठिकै भगवतीक प्रणाम कयल वर मांगल कि भगवती दातृतामे संभावित हमरा याचक जन मनोरथ पूरण मे अशक्ति मरणहु

स्याथिजनमनोरथपूरणाशक्तिस्मरणा दह्यति रिच्यती ततोहं मरण मङ्गीकृत्य याचकजनमनोरथपूरणकामो निजमांसेन भवती मर्च्चितवानस्मीति मातः पूरय मे कामनाम" । देव्युवाच" । बलाह प्रभाते तव द्वारि पूर्ववदेव भूयात् सौवर्णमायतनम् ततो देव्या वरं लब्ध्वा प्रत्यावृत्तो बलाहः कृतार्थो निजमागारमाजगाम ॥

विक्रमादित्यस्तत्सर्व्वं दृष्ट्वा चिन्तयामास सत्यं कथितं वैतालिकेन दानवीर एवायंबलाहः । यतोदानार्थं प्रत्यहं प्राणपरिवर्त्तेन धन मर्ज्जयति भगवती करुणावत्यपि कथमेन मेकेनैव प्राणपरित्यागसाहसेन कृतार्थन्न कुरुते भवतु तावदग्रिमा निशा यदुचितं तत्करिष्यामीति परामृष्य राजद्वारं गत्वा निजाधिकार मलञ्चकार । तदग्रिमनिशायान्तु सचिवसामन्तभृत्यपरिवारितो बलाहः यावदेकान्तं समवेक्ष्यति तावत्सुप्तेष्वेव नगरलोकेषु निःपरिजनो विक्रमादित्यः प्रदोषएव तद्देशं गत्वा तस्यां नद्यांस्नात्वा तस्मिन्नेव सन्तप्ततैलपूर्णकटाहे झंपमकरोत् आर्द्रमांससंयोगात् तप्ततैलकटकटाशब्देन भगवत्या तत्रागत्य

भाषानुवाद ।

सों अधिक थिक तैं हम मरण अङ्गीकार कय याचक जन मनोरथपूर्ण काम अपना मांस सों अपनेंक पूजन कयल है माता पूरण करु हमर मन कामना भगवती कहल है पुत्र बलाह प्रातः काल पूर्व्व वत् तोहरा द्वारमें सुवर्ण गृह हयतौह ततय भगवती सों वर पावि कृतार्थ घूरि पुनि अपन गृह जाइत भेलाह ॥

विक्रमादित्य सेसभचरितदेखि चिन्ताकरइत भेलाह सत्य कहलयछल वैतालिक दानवीर छथि ई बलाह जे दानदेवाहेतु प्रतिदिन प्राणदय बदला धन अर्जजइ छथि भगवती करुणावती किऐक नहि एकहि दिनक प्राणपरित्याग साहसमे कृतार्थ करै छथिनि हो तावत् आगिलिरात्रि जे समुचित सेकरबे ईविचारि राजद्वार जाय अपन अधिकारस्थ भेलाह अगिलीरात्रिमे मन्त्री सामन्त भत्यपरि वारित बलाह यावत् एकान्त अपेक्षा तकि तेहि छलाह तावत जगले नगर लोक एकल विक्रमादित्य सन्ध्या समय तेहि सहा श्मशान जाय ताहि नदीमे स्नानकय ताहितप्ततेल पूर्ण कराह मे झम्प देल आर्द्र मांस संयोगसों तेल कड़कड़ाय उठलसे शब्द सुनि भगवती ततय

मांसानि खादितानि तदस्थीन्यमृतेन सिक्तानि ततो जीवयित्वा पुनरु-त्थितं विक्रमादित्यं बलाह भ्रमेण यावद्भगवती वरेणानुग्रहीतु मिच्छति तावदनेन कटाहे झंपः कृतः। पुनश्च भगवत्या तन्मांसानि खादितानि एवं पुनर्जीवितः पुनः पुनः कृतझम्पः सात्विकस्वभावात विक्रमादित्योय मिति भगवत्या लक्षितो भाषितश्च। देव्युवाच। रे विक्रमादित्य त्वय्यहं परितुष्टैवास्मि ततो लब्धाष्टसिद्धिरपि किमर्थ मेतावत्साहसं प्रकुरुषे अहन्न त्वदीयेन तदीयेनवा मांसेन तृप्यामि किन्तु पुरुषसाहसं परीक्षमाणा कृत्रिमां बुभुक्षां तृप्तिञ्च दर्शयामि सम्प्रति तव साहस परितुष्टास्मीति वरं वृणु॥

तदन्तरं विक्रमादित्यः प्रणम्य वरं वव्रे। विक्रमादित्यउवाच॥ देवि भक्तवत्सलासि जगन्माता बलाहे कृपालु रह मारधितवानस्मि ततो विना मरणसाहसेनैव प्रत्यहं बलाहस्य हारि सौवर्ण मायतन मुत्पाद्यताम्। भगवत्युवाच॥ तथा भवत्विति वरं लब्ध्वा विक्रमादित्यः स्वराज्यं जगाम यथार्थवचनं वैतालिक माहूय रत्नै स्तुरङ्गै र्व्वासोभि र्व्वा

भाषानुवाद।

पावि तनिक मांस भक्षण कयल तनिक अस्थि अमृतैं सिक्त कयल पनि ततय जीवि उठल विक्रमादित्यका बलाह भ्रमैं यावत भगवती वरप्रदान देवाक इक्षा करथि ताव तेहि पुन विक्रमादित्य कराहमे झंपदेल पुन भगवती तनिक मांस खयलनि पुन जिअओलनि पुन २ जीवि २ कराहमैं विक्रमादित्य झंप देल सात्विक स्वभावतः भगवती सो चिनहल भेलाह विक्रमादित्य ई थीक प्रसन्ना भयभगवती पुछल रे विक्रमादित्य तोहरा विषय हम परितुष्टिये छी अष्टसिद्धि तोहरा प्राप्ति तखन तोह कोन हेतु एहन साहस करैछह हम नहि तोहर नहि इनक मांस खाय तृप्ता होइछी किन्तु पुरुषसाहस परीक्षा निमित्त कृत्रिम भोजनेक्षा ओ तृप्तिदेखबइतछी संप्रति तोहर साहससों हम परितृष्टा भेलह्न वरमांगह।

तदनन्तर विक्रमादित्य प्रणाम कय वर मांगल हे देवी भक्तवत्सला बलाहमैं बहुत दया हमरा इमअपनैक आराधना कयल तैं विना साहस सों प्रतिदिन बलाहक हारमें सुवर्णमंदिर उत्पन्न कयदेल जाइनि भगवती कहल तेहने हयत वर पावि विक्रमादित्य अपनराज्य गेलाह सत्यवादी वैतालिक कों बजाय रत्न वस्त्र घोड़ा हाथी

रणैश्च पूजयामास बलाहस्तु सुप्तेषु नगरपरिजनेषु निशाभागे यदा श्मशानदेशंगत स्तदा किमपि न दृष्टवान् किन्त्वाकाश वाचं शुश्राव रे बलाह विक्रमादित्य स्तव खेद मपनीतवान् इत्यनिर्द्धारितार्थो मेव वाचं प्रत्याकलयत् प्रातः किमर्थिभ्यो दास्यामीति श्चिन्ताव्याकुलितः परावृत्य गृहं गतोपि पर्य्यङ्क शयानोपि निद्रान्नालभत तत्रापरिवृत्त एव प्रात रागत्य दौवारिकैः प्रबोधितः सोवर्ण मायतनन्दृष्ट्वा कृतार्थो बभूव आकाशसरस्वत्याः प्रकरणवचनेनार्थं ज्ञातवान् विक्रमादित्यस्य प्रसादान्मम मरणायासनिरपेक्षासिद्धिरियं जातेति निर्द्धारित मप्यर्थं तस्य संसदि वैतालिक स्समागत्य पुनरुक्तञ्चकार तथाहि "पुंसां प्रथम सङ्ख्यो राजाविक्रमकेसरी॥ कल्पते कल्पवल्लीव दानवीरेपि यद्दया॥ * १८ इतिदानवीरकथा॥ *

भाषानुवाद॥

दय सम्मान कय विदाकयल। ततय बलाह राजा सुप्त नगर पुरजन निर्जन निशा भागमे जखन ताहि श्मशान भूमि गेलाह तखन ततय किछु नहि देखलनि किन्तु आकाश वाणी सुनलनि रे बलाह तोहर विक्रमादित्य खेद छोड़ाय गेलाह ई आकाश वाणी कहनि ई जानि प्रातःकाल याचक लोककें हमकी देब ई चिन्ता कुल घूरि अपन आलय अयलाह पलंग पर सुतलाह बलाह अथाहमे मन निद्रा नहि छोड़नि अतिशय चिन्ता तुर कलाह प्रातःकाल द्वारपाल राजा कें जगायोल जागि सुवर्ण मन्दिर विशाल द्वार मे देखि कृतार्थ भोइतभेलाह आकाश सरस्वती वचनसौं बुझलनि जे विक्रमादित्य राजाकप्रसाद सौं पुनि २ हमर मरण साहस दुःख छूटल निश्चय विशेष वार्त्ता सभामे वैतालिक आबि कहल।

दोहा॥

प्रथम रेख सभ पुरुषमे नृपविक्रम मृगराज।
दया कल्प लतिकावदय दानवीरमे आज॥ २७॥

इति दान वीर कथा

अथ दयावीरकथा तद्यथा ॥

दयालुः पुरुषः श्रेष्ठ स्सर्व्वजन्तूपकारकः" । तस्यकीर्त्तिनमात्रेण क ल्याण मुपजायते । १ अस्ति कालिन्दीतीरे योगिनीपुर नामनगरं तत्र अल्लावदीनो यवनराजोबभूव सचैकदाकेनापि निमित्तेन महिमसाहिना म्ने सेनान्ये चुकोप सच यवनसेनानीः तं स्वामिनं कुपितं प्राणग्राहकञ्च ज्ञात्वाचिन्तयामास सामर्षी राजा विश्वसनीयोन भवति । "तथाहि" । राजानः पिशुनाः सर्प्पा विश्वस्तव्या न कुत्रचित् । अतर्कितं विनिघ्नन्ति दर्शयन्तोपि सम्भ्रमम् २॥ तदिदानीं यावदनिरुद्धोस्मि तावदितः क्वापि गत्वा निजप्राणरक्षां" करोमीति परामृश्य सपरिवारः पलायितः पलाय मानो प्यचिन्तयत् यत्सपरिवारस्य दूरगमन मसम्भवं परिवारं परित्य

भाषानुवाद ।

दयावीरकथा ॥

सोरठा ॥

सकलजन्त उपकार पुरुष श्रेष्ठ जनिकां दया ।
यशोगान संसार नाम लयित कल्याणहो ॥ १ ॥

कलयमुना तीरमें योगिनीपुर *१ नाम नगर ततय अल्लावद्दीन यवनराज छलाह श्रो एक समय कोनहु कारण * २ महिमसाहि सेनाधिप उपर अत्यन्त कोप करइत भेलाह महिम साहि तनि स्वामीकां क्रोधातुर जानल प्राणहरण अकारण करताहे ई मन मानि की कर्त्तव्य चिन्ता करइत भेल विचारल क्रोधातुर राजाक विश्वास नहि

चौपाइ

राजा पिशुन सर्पविश्वास । अवितर्कित कर जीवक नास ॥
ई नहि मानथि दोष अदोष । दुस्सह हिनकर जानक रोष ॥ २ ॥

तैं एहि कालमै यावत् घेडल नहिगेलछी तावत् एतय सौं कतहु जाय अपन प्राणरक्षा करी ई विचारि परिवार सहित पड़यलाह पड़यलहु मैं मनमें चिन्ताकरथि सपरिवार दूर गमन असंभव तैं परिवार त्यागि पड़ाइ इहो विचार भहि ॥

---

२ * वहुत तवारिखमैं मीर मुहम्मद साहि नाम लिखा है । दिल्ली * । १

ज्य पलायन मपि नोचितम् ॥ जीवनार्थं कुलं त्यक्त्वा योऽतिदूरतरं व्रजेत् । लोकान्तरगतस्यैव किन्तस्य जीवितेन वा ३ तदिहैव दयावीरं हम्मीर देवं समाश्रित्य तिष्ठामीति परामृष्य यवनो हम्मीरदेव मुपगम्याह । महिमसाहिरुवाच ॥ देवविनापराधं हन्तुमुद्यतस्य स्वामिन स्त्रासेनाहं त्वच्छरण मागतोऽस्मि यदिमां रक्षितुं शक्नोषि तदाविश्वासन्देहि नो चेदितोन्यत्र गच्छामि ॥

राजोवाच । यवन मम शरणागतं त्वयि जीवति यमोऽपि त्वां पराभवितु न्न शक्नोति किम्पुनर्य्यवनराजः । तद भयं तिष्ठ तत स्तस्य राज्ञो वच नेन स यवनराज स्तस्मिन् रणस्तम्भनाम्नि दुर्गे निश्शङ्क मुवास क्रमेण यवनराज स्तत्रावस्थितं तं विदित्वा परमसामर्षः करितुरंगपदातिपदा घातै र्हरिन्नीश्चालयन् काहल कोलाहलै र्दिशो मुखरयन् कियद्भिर्व्वा

भाषानुवाद ॥

दोहा

जीवनार्थ कुलत्यागिकै दूरजाय करवास ।
लोकान्तर सनको तनिक जीवन विभव विलास ॥ ३

तैं एतहि दयावीर हम्मीर राजाक शरण जाय रही ई विचारि यवन महिम साहि हम्मीर राजाक शरण जाय कहल हे राजा विना अपराध हमरा स्वामी मारक इच्छा कयलनि अछि ताहि त्रासें हम अपनैंक सरण आयलछी जौं हमर रक्षा कयसकी तैं विश्वास देलजाय नहि जौं कहीतैं एहू ठाम सौं आन ठाम जाइ ॥

राजा कहल निश्चिंत हमर शरणागत कैं हमरा जीवयित यमो नहि हरणदय सक ताह की पुन यवनराजा तैं निर्भयरहू ततय हुनि राजाक वचनसौं से महिमसाहिरणा स्तम्भ नाम किलामे निश्शंक वास कयल क्रम २ यवनराज बुझल जे महिमसाहि ता हिरणास्तम्भ किलामे अछि सेजानि अत्यन्त क्रोधातुर हाथी घोड़ा पदाति पदाघातसौं

सरै र्लंघितवर्त्मा दुर्ग्गद्वार मागत्य शरासारैः प्रलयघनवृष्टी र्दर्शया मास। हम्मीरदेवोपि परिखागभीरचतुर्म्मेखलं कुन्तदन्तुरितप्राकार शिखरं पताकाबोधितद्वारश्रियं दुर्ग्गं कृत्वा ज्याघातकर्णकटुभि र्व्वाणै र्ग्गगनमण्डल मन्धकारितवान् प्रथमयुद्धानन्तरं यवनराजेन हम्मीर देवं प्रति दूतः प्रहितः। दूतउवाच। हे राजन् हम्मीर श्रीमान् यवनाधि राज स्त्वामादिशति यन्ममापथ्यकारिणं महिमसाहिं परित्यज्य देहि यद्येनं न दास्यसि तदा श्वस्तने प्रभाते तव दुर्ग्गं तुरगखुराघातै श्चूर्णावशेषं कृत्वा महिम साहिनामानं हत्वान्तकपुरं नेष्यामि। हम्मीर देवउवाच॥ रे दूत त्वमवध्योसि तदाहं किंकरवाणि। अस्योत्तरं तव स्वामिने खड्गधाराभिरेव दास्यामि न वचोभिः। मम शरणागतं यमोपि विपक्षदृष्ट्या वीक्षितुं नशक्नोति किम्पुन र्य्यवनराजः ततो निर्भर्त्सिते दूते गति यवनराजः कुपित्वा युद्धसमुद्धुरो बभूव एव मुभयो रपि बलयो र्युद्धे प्रवर्त्तमाने त्रीणि वर्षाणि यावत् प्रत्यहं सन्मुखाः पराङमुखाः प्रहारिणः पराभूता हन्तारो हताश्च। परस्पर मुभयबलयोधा बभूवुः।

भाषानुवाद।

पृथिवी कम्पकरवयित हुंकारनिभान कोलाहलसौं दिशापूरितकरवयितकतिकदि हम्मी रराजक किलाद्वार समीप पहुचलाह भरवहि प्रलयमेघ वृष्टिक सृष्टि दृष्टि देखाओल हम्मीरदेवो पुन परिखा गभीर चारि मेखला भालासौं प्राकारशिखर दन्तुरितकिला पताका अपन शोभा कय भर वुहिसौं गगन मण्डल अन्धकार करयित भेलाह। प्रथम युद्धानन्तर यवनराजा हम्मीर देव निकट दूत पठाओल। दूत कहल हे राजा हम्मीर यवनाधिप श्रीमान अहाँका एहन आज्ञा दैछथि जे हमर अनिष्ट चिन्तन कौ निहार महिम साहिकाँ अपनै त्यागिकैं देय हमरा। नहितँ काल्हि प्रातःकालहि किला घोड़ाक टापसौं चूरर करवाय। महिमसाहिकैं मारि यमपुर पठाय देव। * हम्मीर देव कहल रे दूत तौं अवध्य थिकांहि ततय हम की करु। एकर उत्तर तोहरा स्वामी काँ खड्ग धारा सौं देवैनि की वचनसौं नोय। हमरशरणागतकाँ शत्रु दृष्टिसौं यमोनहि देखि सकैछथि की पुन यवनराजा गर्जित दूतकवचन सुनि यवनराजा युद्धमे उद्यत भेलाह एहि तरह दुनू दलकाँ। तीनि वर्ष निरन्तर युद्ध भेल सम्मुख पराङमुख प्रहार कर्त्ता बहुत योधाहत भेल॥

पश्चादल्पावशिष्टसुभटे यवनसैन्ये दुर्गं ग्रहीतु मशक्तो यवनराजः परावृत्य निजनगरगमनाकांक्षी बभूव तत्र भग्नोद्यमं दृष्ट्वा रायमल्ल रामपालनामानौ हम्मीरदेवस्य सचिवौ दुष्टौ यवनराजमागत्य मिलितौ तावूचतुः। यवनराज भवता क्वापि न गन्तव्यं दुर्गे दुर्भिक्ष मापतितं आवां दुर्गस्य मर्म्मज्ञौ श्वः परश्वो वा दुर्गं ग्राहयिष्यावः। ततस्तौ दुष्ट सचिवौ पुरस्कृत्य यवनराजेन दुर्गद्वाराण्यवरुद्धानि। तथा। संकटं दृष्ट्वा हम्मीरदेवः स्वसैन्यानि प्रत्युवाच। रेरे याजदेवप्रभृतयो योधाः परिमित बलोऽहं शरणागतकरुणया प्रवृद्धबलेनापि यवनराजेन समं योत्स्यामि ए तन्नीतिविदामसम्मतं कर्म्म ततो यूयं सर्व्वे दुर्गाद्बहिर्भूय स्थानान्तरं गच्छत। तऊचुः। देव भवान्निरपराधो राजा यवनस्य करुणया संग्रामे मरणमङ्गीकुरुते वयं भवतउपजीव्यभुजः कथमिदानीं भवन्तं स्वामिनं परित्यज्य कापुरुषपदवी मनुसरिष्यामः किन्तु श्वस्तने प्रभाते देवस्य शत्रुं हत्वा प्रभोर्म्मनोरथं साधयिष्यामः यवनस्त्वयं वराकः स्थानान्तरं

भाषानुवाद।

पश्चात् आधा सुभट बांचल। थोड़ सेना देखि यवन राजा किला में अन्न का पकड़वा अशक्य मन घूरि यवन राजा अपन नगर चलवाक इच्छा कयल तनिक तथा विध भग्न उद्यम देखि हम्मीर देवक मन्त्री दुष्ट राय मल्ल औ राम पाल यवन राजा सौं मिलि गेलथी दनू गोटैं कहलथि। हे यवन राज अपनें कतहु नहि गेल जाय किला में दुर्भिक्ष पड़ल हम दुनू मन्त्री किलाक मर्म्म जाननिहार थिकाह प्रातःकाल की परशू किला दखल कराय देब तखन दुष्ट मन्त्री कां पुरस्कार सहित आगां लय यवन राज किला द्वार सभ रोकल से देखि हम्मीर राजा सुभट सौं कहल रेरे जाज आदि योधा थोड़ सैन्य हमारा रहल अछि शरणागतक करुणासें। हम यवनराज महाबलसौं युद्ध करबे। ई नीति मातक अनभिमत कर्म्म तैं तोहरा सबहि किलासें। बाहर भय स्थानान्तर जाह औ योधालोक कहल"। हे राजा अपनें निरपराध यवनक करुणासौं संग्राम स्वीकार कयल हमरा सबहि अपनेंक प्रतिपालित कोना एहि समय अपनें स्वामी तनिकां परित्याग कय का पुरुष पदवी अनु सरण करब। किन्तु प्रातःकाल जाय अपनेक शत्रु

प्रहीयतां तेनरक्षणीयरक्षा संभवति यद्वानिमित्तकएवाय मारम्भो यतः । "यवनउवाच" । देव किमर्थं ममैकस्य विदेशिनोरक्षार्थं सपुत्रकलत्रं स्वकीयराज्यञ्च विनाशयिष्यसि ततोमां परित्यज्य देहि ॥

राजोवाच । यवन मैवं ब्रूहि । 'यतः' । भौतिकेन शरीरेण नश्वरेण चिरस्थिरम् । लप्स्यमानं यशः कोवा परिहर्त्तुं समीहते ४ । किञ्च । यदा मन्यसे तदानिर्भयस्थानं त्वां प्रापयामि । यवनउवाच । राजन् मैवं ब्रूहि सर्व्वथा प्रथमं मयैव विपक्षशिरसि खड्गप्रहारः कर्त्तव्यः । स्त्रियः परं वहिःक्रियन्ताम् । स्त्रियऊचुः ॥ कथन्नः स्वामिनः शरणागत रक्षार्थं संग्राम मङ्गीकृत्य स्वर्गयात्रामहोत्सवे प्रवर्त्तते कथं तैर्विना भूतले स्थास्यामः । 'यतः' । मा जीवन्तु स्त्रियोऽनाथा वृक्षेणेव विना लताः ॥ साध्वीनां जगति प्राणाः पतिप्राणानुगामिनः । ५ ततो वयमपि

भाषानुवाद ।

कैं मारि प्रभु मनोरथ साधन करब । महिमसाहि यवन का स्थानान्तर पठाय देलजाय शरणागत पालन होएत । तनिके रक्षार्थ ई घोर युद्ध आरम्भभेल अछि" यवन महिम साहि कहल" एक विदेशी हमर रक्षार्थ पुत्र स्त्री राज्य विनाश करब निर्हेतु तैं हमरहि परित्याग कय यवन राज रूप यम का देल जाय ॥

राजाहम्वीर कहल हे यवन एहन नहि वक्तव्य ॥

सोरठा ॥

भौतिक देह अनित्य चिरस्थायि यश सकल थल ।
शरता भय राखित्य नहि परित्यागव वीर हम ॥ ४ ॥

जैं। अहां कां नीक बूझि पड़ तौं निर्भय स्थान मे दय आबी । यवन कहल हे राजा एहन नहि कहल जाय सर्व्वथा हमहि शत्रुक माथ तरुआरि मारब । परन्तु स्त्री लोक कां बाहर कयल जाय । "ततय स्त्री लोक कहल" कोना हमर स्वामी शरणा-गत रक्षार्थ संग्रामस्वीकार कय स्वर्ग यात्रा महोत्सव मे जयताह कोना तनिका विना हमरा सबहि पृथवी मैं रहब ॥

दोहा ॥

जिवथु अनाथा नारि जनु लता जेहन विनु गाछ ।
पति प्राणावधि प्राण रह जल विनु जेहन माछ ॥ ५ ॥

तैं हमरा सबहि वीर पत्नी समुचित अग्नि प्रवेश करब एहि गत ॥

वीरस्त्रीजनोचितं हुताशनप्रवेश माचरिष्यामः। एवं। भटैरङ्गीकृतं युद्धं स्त्रीभि रिष्टो हुताशनः। राज्ञो हम्मीरदेवस्य परार्थं जीव मुज्झतः॥ ६ ततः प्रभाते युद्धे वर्त्तमाने हम्मीरदेव स्सन्नद्धस्तुरगारूढो निजसुभट सार्थसहितः पराक्रमं कुर्व्वाणो दुर्गान्निस्सृत्य खड्गधाराप्रहारै च्छिन्न सबलवाजिनः पातयन् कुञ्जरान् घातयन् पदातो न्निर्व्वापयन् भयं प्रव र्त्तयन् कबन्धान्नर्त्तयन् रुधिरधाराप्रवाहेण मेदनीमण्डल मलंकृत्य शरभ ग्निसर्व्वाङ्गस्तुरगपृष्ठे त्यक्तप्राणः सङ्ग्रामभूमौ निपपात सूर्य्यमण्डलभेदी बभूव तथाहि। तेप्रासादा निरुपमगुणा स्ताः प्रसन्नास्तरुण्यो राज्यं तच्च द्रविणबहुलन्ते द्विपा स्ते तुरङ्गाः। त्यक्तुं यत्र प्रभवति परः किञ्चिदेकं परार्थे सर्व्वन्त्यक्त्वा समिति पतितो हन्त हम्मीरदेवः। ७ इतिदयावीरकथा॥

भाषानुवाद।

दोहा॥

भट निश्चय रण रटत नहि स्त्री निश्चय जरि आगि।
राज वीर हम्मीर चल परलय जीवन त्यागि॥ ६॥

ततश्च प्रभात युद्ध मे हम्मीर देव सन्नद्ध अश्ववार निज सुभट सार्थ सहित आ छित मैं पराक्रम करइत। किलासैं। बाहर खड्ग धारा प्रहारसौं अनुक अश्व काटि खसवैत हस्तिक घात करयित पदातिक प्राण लयित भय देख वयित कबन्ध नचवयित शोणित धारासो पृथिवी अलंकृत होइत शरसौं वेधित सर्व्वाङ्ग तुरगारूढ प्राण त्यागल सम्मुख संग्राम भूमि मैं खसलाह सूर्य्य मण्डल भेदी होइत भेलाह।

षटपद॥

धवल महल अक्सिह अतुल गुण सुन्दरि नारी।
रैह राज्य बड़ द्रव्य तुरग हाथी अकि भारी॥
एको त्याग के करत आन लालच मन आवै।
शरणागत रक्षार्थ आनके प्राण गमावै॥
धन्य धन्य हम्मीर नृप वीर समर शोभित खसल।
धन्य पिता जननी जिनक क्षत्रधारि क्षत्रिय अचल॥ ७॥

इति दयावीर कथा॥

अथ युद्धवीरकथा । तद्यथा । कातरश्शूरतां यांति क्रियावानलसो भवेत् । युद्धवीरकथांश्रुत्वा जयमाप्नोति मानवः ॥ १ आसीन्मिथिलायां कर्णाटकुलसम्भवस्य नान्यदेवनाम्नोराज्ञः पुत्रो मल्लदेवनामधेयः कुमारः सत्वसिंह इव स्वभावात् पराक्रमरसिकश्चिन्तयामास य इदं युवराजोपि पितुरुपार्ज्जिते राज्ये सुखमनुभवामीति न मम पौरुषम् ॥ यतः । पराश्रयेण जीवन्ति कातराः शिशवः स्त्रियः । सिंहा स्सत्पुरुषाश्चैव निजदर्प्पोपजीविनः ॥ २ ॥ नवा निजभुजोपार्ज्जितेन वित्तेन विनापितृभक्तिरपि सम्भवति । यदुक्तम् अर्ज्जितं भुज्यते यस्य यस्य ख्यापाकर्ण्यते यशः । पितुर्व्वंशसुतस्यापि तेन पुत्रेण पुत्रिता । ३ ॥ ततः क्वापि गत्वा भुजदर्प्पेण पौरुषमर्ज्जयामि इति परामृश्य कुमारः कान्यकुब्जनाम जनपदं ज

भाषानुवाद ।

अथ युद्धवीर कथा ॥

सोरठा ॥

कातर जन हो शूर क्रियावान आलसि ततय ।
जय पावथि भरिपूर युद्धवीर को सुन कथा ॥ १ ॥

छलाह मिथिला मैं "कर्णाट कुल संभव" नान्य देव राजाक बालक मल्लदेव नामधारी कुमार से स्वभाव सिंह सदृश पराक्रम समर रसिक चिन्ता कयल जों हम युवराज पिताक उपार्ज्जित राज्यमें सुखसौं विषय भोग कयल तौ हमर पौरुष की।

चौपाई ॥

जिवथि पराश्रय मैं जन तीनि । कातर बालक नारि अधीनि ।
सिंहक सत्पुरुषक ई रीति । निजभुज दर्पित जीवन प्रीति ॥ २ ॥

नहि अपन बाहुबल अर्ज्जित वित्त बिना पिताक भक्ति सम्भव होइछ ॥

शोरठा ॥

जनिक उपार्ज्जित वित्त पिता भोग कर मुदित मन ।
सयश सुनथि दय चित्त पुत्रवान तहि सौं पिता ॥ ३ ॥

तैं हेतु कतहु जाय अपन बाहुबल दर्पसों पौरुष अर्ज्जन करी ई विचारि कुमार

गाम तत्र जयचन्द्रनाम्नो राज्ञः काशीश्वरस्य सुभटपरिपाट्या सन्दर्शन
ञ्चकार सराजा तं सत्कृत्य प्रियसहचर मकरोत् कुमारस्तु तस्य राज्ञः
सेवायां वर्त्तमानः क्रमक्रमेणाधिकसन्मानपात्रं एकदा समादर वैषम्य
मन्वभूत्। तथाहि॥

आदरोदुर्लभोराज्ञां वस्तुन्यल्पगुणेपिच। प्रगुणेपि सुखप्राप्ते भवेन्नू
नमनादरः॥ ४॥ ततः सकुमारश्चिन्तयामास॥ धनं तृष्णावतः प्राणा वह्नेः
प्राणास्तथेन्धनम्। कामुकस्यस्त्रियः प्राणाः मान प्राणा मनस्विनः॥ ५

भाषानुवाद।

कान्य कुब्ज देश गेला ततय जयचन्द्र नामक राजा काशीश्वरक सुभट परिपाटी सौं दर्शन कयल से राजा तनिका सत्कारसौं प्रिय सहचर कयल। से कुमार क्रमहि क्रम राज सेवा विषय अधिक सन्मान पात्र भेलाह एक समय अपन मन्दादर जानल॥

दोहा॥

नृप आदर दुर्लभ विदित थोड़हु गुण मैं प्राप्त।
गुणाधिकहु सुख प्राप्त भैं आदर जाथि समाप्त। ४॥
तृष्णावानक प्राण धन अग्निक इन्धन प्राण।
कामिक वनिता प्राण हो प्राणमनस्विक मान॥ ५।

*यह नान्य राजा क्षत्रिय कर्णाट था मिथिला मैं शाके १०१९ मैं राज्यपाया॥ २२६ वर्ष उसके सन्तानमै राज्यथा राज्यारम्भ श्लोक यहहै॥ नन्देन्दुविन्द विधुसम्मितशाकवर्षे। तच्छ्रावणे सितदले मुनि सिद्ध तिथ्याम्। स्वातौ शनैश्वरयुते करिवैरिलग्ने तन्नान्यदेव नृपतिर्व्विदधीत वास्तुम्। १॥

वह नान्य एक सर्पके फणापर लिखा श्लोक देखा। श्लोकयह। रामोविति नलोवेत्ति वेत्तिराज पुरूरवाः। अलर्कस्य धनं प्राप्य नान्यो राजा भविष्यति। जहां सर्प था होहको खोदाने से असंख्य खजाना मिला जिसका मन्त्री का स्थान औ तड़ाग सेकड़ो औ क मलादित्य विष्णु, स्थापित अवदी प्रतन्ना अंधड़ा ठाठी ग्राममैं है आधार शिला में लेख श्लोकार्थ यह है नान्य राजा का मन्त्री श्रीधर श्रीधर को प्रतिष्ठा किया गिरा चौकठ पत्थलमें मकरध्वज योगी यह लिखा है अब के तवारिख लिखने वाले अद्भुत जान मिथ्या ठहरा कर पुरानी लिपि लोपही कर देते पर दोसरा युधिष्ठिर राजा से अब तक राजा वलीको कितावमें हम विस्तार लिखैंगे॥ यह राजा तिरहुत मे नानपुर प्रसिद्ध मे वसता था॥

ततो राजान मब्रवीत् देव भवतः प्रभु धर्म्मं श्रुत्वाह मिहागतोस्मि साम्प्रत मन्यत्र यास्यामि राजोवाच किन्तवोद्वेगकारणं येनाऽन्यत्र यास्यसि ॥ मल्लदेवउवाच ॥ देव भवतः समादरः क्रमक्रमेण मयि शिथिलो भवितेति त्याशंक्यसाम्प्रत मितोन्यत्र गच्छामि राजोवाच ॥ कुतोवगत मिदम् ॥ मल्लदेव उवाच ॥ यतः शौर्यमूलको मादृशां समादरो भवति शौर्यन्तु वाग्युद्धेनकेवलं ख्यापयितुं शक्यते अस्त्रयुद्धं भवतो राज्ये दृश्यत एवन । राजोवाच । आसमुद्रकरग्राहिणो मम युद्धपरिपन्थी कोपि नास्ति ततकेन समं युद्धं भविष्यति कुमारउवाच ॥ देवराज्यस्य फलं राज्ञो विजयसुखं विनायुद्धेन कुतो विजयः कुतो वा तत्सुखम् यदि देवोमन्यते तदाह मितो गच्छामि । यस्य राज्य मह्हङ्गमिष्यामि सएव देवस्य परिपन्थी भविता राजा सक्रोधमाह रे कुमार वत्स्यं वराकः केन दर्पेण त्व माप्रसे गच्छ तावद्यत्र गच्छसि । यत्रत्वं यास्यसि तत्रैवाहं प्रयाणं करिष्यामि । कुमारउवाच । अय महं गच्छामि ततः कुमारः चिक्कोर नाम्नो नृपस्य राज्यं जगाम तदग्रे तं श्रुत्वा काशीश्वर

भाषानुवाद ।

ततय एकसमय राजाकें कहल हेदेव अपनेंक प्रभुधर्म्मसुनि अयलहुँ एखनहम अन्यस्थान कतहु जायव । राजा पुछल कुमार की ताहरा उद्वेग कारण जे हेतु अनतय जायव मल्लदेवकहल अपनेंक सम आदरहमराविषय नहि रहत ई विचारि आनठाम जायव राजाकहल कोनावुझल अनादर मल्लदेवकहल हमर सदृशलोकका आदरशूरता मूलक शूरत्ववचन संग्रामसों नहिख्यातिकय सकैछी * राजाकहल आसमुद्रकरग्राही हमरा कैओ शत्रु नहि छथि तखन ककरासंग युद्ध हयत कुमार कहल हेराजा राज्यक फल राजाका विजय सुख विना युद्धसों कतय विजय वात त्सुख । जोंअपनें नीक मानीतों हमएतयसों जाइ । जनिकराजाक राज्य हम जायव से ह अपनेंक युद्ध परिपन्थी हयता । राजा क्रोधसहित कहल रेकुमार केतों वेचारा। कौन दर्पसों कहैतछं जो जतय जयबें ततहि हमहु यात्रा करव कुमारक हल अैह हम चललहु ततय कुमार चिक्कोरनाम राजाक राज्यमें गेलाह तकर आगा ततयगेल छथि मल्ल देव से सुनि काशीश्वर चतुरंग दल सहित चिक्कोर राजाक

श्चतुरङ्गबलसहितः चिक्कोरं प्रति ययौ कियतापि कालेन तत्सन्निधान मागतं श्रुत्वा चिक्कोरः स्वमन्त्रिभिस्समं मन्त्रयामास । यत्काशीश्वरो म हाराजः कोपादिश्ची मा मुद्दिश्य समायाति तदिदानीं किं विधातु मुचितं भवति । मन्त्रिणऊचुः । देव भवतः परिमितबलस्य तेन महाबले न समं युद्धनोचितम् नवा तस्य महेच्छस्य सन्धानञ्चमम्भवतो धनं वि द्यते तदिदानीं दुर्गाश्रयण मुचितम् ततः पलायितु मुद्यतं चिक्कोर राजन्दृष्ट्वा मल्लदेवोऽब्रवीत ॥

राजन किमिति पलायितव्यं भवता भवन्त मुद्दिश्य काशीश्वरो न कदा प्यागतो नवाप्यग्रेप्यागमिष्यति यदि भवान प्रत्येति कथयामि त दागमननिमित्तम भवतान भेतव्यम । चिक्कोरउवाच ॥ किन्तन्निमित्तम् पूर्व्वकथांकथयामास । चिक्कोरउवाच । तर्हि किमुचितं मल्लदेवउवाच । सचेत्केवलं मामेवोद्दिश्य समायाति तदा भवता न पलायितव्यं किन्तु मयैकेनैव समं बहूनां तत्सुभटानां सङ्ग्रामकुतूहल न्द्रष्टव्यम् । चिक्को

भाषानुवाद ॥

राज्यप्रति गेलाह कतोक कालें से आयल छथि सुनि चिक्कोर राजा मन्त्री सहित विचार कयल आ: काशीश्वर राजा क्रोधातुर हमरा राज्य अबैछथि की कर्त्तव्य ततय मन्त्री कहल हे महाराज परिमित सेना सौं अपनें का काशीराज महाबलक संग युद्ध नहि उ चित नहि ओ महाधनेकसौं सन्धि करब से ततेक धन ततय सम्प्रति किला में जाय रही से उचित अतः पर स्थानान्तर पड़यवाक उद्योग करयित चिक्कोर राजा को देखि मल्लदेव कहल ॥

हेराजा की अहां पड़ायक इच्छा करैछी अपनेंक हेतु काशीराज नहि अबैछथि नहि कदाचित अयोताह जौं प्रतीति होतौं हुनक आगमन हेतु हम कहैछी राजा कहल कहू कहल मल्लदेव अपने किछु भय नहि कयल जाय पर्व्वकथा अपन कहि सुनाय देल पुन चिक्कोर राजा पूछल हे मल्लदेव सम्प्रति की उचित कर्त्तव्य कहल कुमार काशीश्वर केवल हमरा उद्देश कयलेश्र वैछथि तें अपनें व्यर्थ जनु पड़ाइ किन्तु हम एकला तनिराजाक अनेक सुभट सङ्ग संग्राम करब से कुतूहल देखू चिक्कोर

रउवाच । तेन महाराजे नानन्तबलेन सम मेकामिन स्तवन समुचितं युद्ध मोति विरुद्ध मेतत् । कुमारउवाच ॥ शूरः कर्म्मणि परा मर्षन्न सहते । चिक्कोरउवाच ॥ तह्यविमृष्यकारिणां विपदन्तः प्रारम्भः । कुमारोब्रूते अलममुना विवादेन । यत्करिष्येस्तयं कर्म्म भोक्ष्ये तस्य स्वयंफलम । स्वापराधविपन्नानां विपत्तिः केन शोच्यते ॥ ६ चिक्कोरउवाच । युक्तं तुल्यबले युद्ध न्तत्रास्ति जयसंशयः । प्रबलेऽरिबले वह्नौके पतन्ति पतङ्गवत ॥ ७ ॥ कुमारउवाच ॥ यशश्चिकीर्षया येनमृत्यु रङ्गीकृतो रणे । तस्य परं भयस्थानं किंरिपोः प्रबला इपि ॥ ८ ॥ किञ्च यशः कामनया पुंसां रणे मरण मिच्छताम् परिपन्थि महत्वेन महत्व यंशतांभवेत् ॥ ९ ॥ अपिच । प्राणचाणाय

भाषानुवाद।

राजा कहलथि जो मल्लदेव यो अनन्तबल राजासो एकरूर युद्ध अहां करत से नीति विरोध कर्म्म थीक कुमार कहल धरकर्म्म में चानक आमर्ष नहि सहि सके छथि चिक्कोर राजा कहल अविचार कार्य्य कर्त्ता कां आरम्भ विपत्तिक अन्त कुमार कहल व्यर्थ ई वाद विवादसों

सोरठा ॥

करब जे हम हम कर्म्म अपनहि होयत भोग फल ॥
निज अपराध अधर्म्म विपतिक के जन शोच कर ॥ ६ ॥

चिक्कोर राजा कहल कुमार ॥

सोरठा ॥

सम बल सों भलयद्ध ततय विजय संशय बनल ॥
अति बल रिपु रण क्रुद्ध अनल पतंगक्षि मुर्ख पड़ ॥ ७ ॥

कुमार कहल ।

जनि जनकां यशकाम समर मरण स्वीकार मन ।
दोसर की भय धाम प्रबल शत्रु सों नृपति सुन ॥ ८ ॥
जे संगर मरणोछ जशक कामना लोक मैं ।
शत्रु महत्व अपेक्ष यश महत्व अति प्रयतयथ ॥ ९ ॥

सङ्ग्रामात्पलायन्तेऽपियेनराः । मृत्यु रावश्यकस्तेषां कार्प्पण्य मतिरिच्यते। १० ॥ चिक्कोरउवाच। कुमार भवान् महावीरः काशीश्वरो महाराजस्ततो युवयो स्सङ्ग्रामसंहर्षोऽस्मदादिभिः श्रोतु मपि न शक्यते किंपुनर्द्रष्टुम कुमारउवाच। यदिभवतो युद्धस्य दर्शन मप्यनभिमतन्तदाभवान् क्वापि यमपुरुषानिरीक्ष्यमाणस्थानङ्गत्वा भवत्वमरः मयाच योद्धव्य मेव परन्ततो महं हस्तिनमेकं दत्वा गच्छतु भवान् मयातु शून्यस्यापि भवतो नगरस्या वेक्षाकर्त्तव्या ॥

चिक्कोरः कुमारस्य वचनेन तथाकृत्वा पलायितः। तदग्रिमप्रभाते भैरवीभाङ्कारैर्गगनान्तं पूरयन् कुर्म्मंमर्म्म स्पृशा खुरप्रहारेण धरामण्डलञ्च पलयन् महाराजो जयचन्द्र स्तन्नगरसन्निधान माजगाम मल्लदेवस्तु तमागतं श्रुत्वा कृतसन्नाहः परिगृहीतास्त्रो गजारूढः पुरोगत्वा रा

भाषानुवाद।

सोरठा॥

जे रणत्यागि पड़ाथि प्राण बचैबा हेतु सौं।
एकदिन यम पुर जाथि हास्य भीरुता लोक मे ॥ १० ॥

चिक्कोर राजा कहल।

हे कुमार अपने महावीर श्री काशीश्वर महाराज तैं ई दुहु जनक युद्ध ई हमरा सबहि शुनि नहि सकैछी की पुन देखब । कुमार कहल हे राजा जौं अपने का युद्ध दर्शन अप्रिय अछि तौं यतय यम पुरुषक अदर्शन स्थान हो ततय जाय निवास करल जाय अमर भेल जाय हमतौं युद्ध करबे करब किन्तु एक हाथी सवारी देल जाय गेलजाय स्थानान्तर अपने हम अपनैक शून्य नगरक अपेक्षा करब ॥

चिक्कोरराजा कुमार वचन कय पड़यलाह। तदग्रिम प्रातः काल भैरवी भांकार सौं गगनान्त पुरण करयित कुर्म्म मर्म्मस्पर्श कयनि हार घोड़ाक टाप सौं धरामण्डल कौं कम्प वढ वयित महाराज जयचन्द्र तनिक नगर निकट संप्राप्त भेलाह मल्लदेव तनिक आगमन सुनि पहिरि सन्नाह अस्त्र ग्रहणकय हाथी सवार भय निर्भय निकट जाय काशिराज कौं देखयित भेलाह राजा जयचन्द्र पुत्रक के तोरे हाथी सवारसन्निकारक

आनन्ददर्शं राजोवाच ॥ कस्त्वं रे कुञ्जरारूढ सन्धानार्थी चिक्कोरस्य दूतो युद्धार्थी मल्लदेवोऽसि वा । मल्लदेव उवाच ॥ राजन् नाहं दूतो नवा सन्धानार्थी किन्तु तव प्रतिमल्लो मल्लदेवोऽस्मि । राजा विहस्याह यद्यहं मम प्रतिमल्लता सिद्धैव त्वमिदानीं समागत्यानुसरमाभ् मल्लदेव उवाच ॥ त्वमेव किञ्च मामनुसरसि संप्रति त्वं तुरगारूढोऽसि अहं गजारूढोऽस्मि त्वमप्यस्त्राणि धारयसि अहमप्यस्त्राणि धारयामि तदिदानीं प्रहारसमये क वचनवैचित्र्यावा अवकाशः । राजा साश्चर्य्यं सैनिकान्प्रत्याह रे रे सैनिका जीवन्तं मल्लदेवं धृत्वा मेददत मल्लदेव सर्व्वान् प्रत्याह ॥ दिक्पालाः कृतसाक्षिणश्च मुनयः सिद्धास्सुरा खेचरा सर्व्वे पश्यत कौतुकं नृपिशितैरक्षोगणास्तृप्यत । मोदध्वामरसः प्रयान्तु सहसा वीरानुरागात्सुका एकस्याहस मातनोति बहुभिः श्रीमल्लदेवो रणे ॥

भाषानुवाद ॥

चिक्कोरक दूत किम्वा मल्लदेव युद्धार्थी थिकाँहि उत्तर देल मल्लदेव हे महाराज नहि हमि राजाक सन्धि चतुर दूत किन्त अपनेक प्रति मल्ल मल्लदेव हम राजा हँसयित कहल तौक हमर प्रति मल्लता सिद्ध अछि तौं तोहँ आवह हमर निकट एखन मल्लदेव कहल अपनहि कियैक नहि अबैतछी एखन अपनै तुरगारूढ हम गजारूढ अपनै अस्त्र धारी हमहु अस्त्र धयल छिछी तें एहि अस्त्र प्रहार समय कतय कथा विचित्रक अवसर । राजा आश्चर्य्य मानि सैनिककैं कहल जीवितहि मल्लदेवका पकड़ि हमरा आनिदे मल्लदेव सभकां कहल ।

षटपद ॥

सकल गगन चरदेव सिद्ध मुनि जन साक्षी मन दय ।
साक्षी सभ जन रहथु सकलदिक्पाल यतन भय ॥
देखथु नरवर समर रक्तधारा तट आवथु ।
रक्षो गण मन तृप्त होथु वीरक यश गावथु ॥
होयु हर्षिता अप्सरा मल्लदेव एकरुर लड़व ।
कामि राज से नालवा वाजजका निर्भय पड़व ॥ ११ ॥

ततो निरोद्धुकामान् परितो विपक्षसुभटान् बहून् मल्लदेवो नाराच चक्रै र्निजघान तेनच निहता न्निजप्रियसुभटान्भूमौ दृष्ट्वा जयचन्द्र स्सेना मादिदेश रेरे वीरपुरुषाः यद्ये नं मुमूर्षुं मवरोद्धु न्न शक्नुथ तदा शरा सारैः क्षपयत ततस्तां प्रभो राज्ञा मासाद्य सुभटास्तं मल्लदेवं युग पदेव वज्राघातनिर्घोषदारुणैः शरासारै रभ्यषिञ्चन् शरशल्लित श्वासौ कु मराङ्गभूमौ निपपात तथाच तत्समये कवेः कस्यापि श्लोकः ॥ अशीतिवर्ष देशीयश्चिक्रोरः प्रपलायितः।षोडशाब्दस्तु कार्णाट सम्मुखः पतितो रणे ११॥ तञ्च प्रचुरनाराचभिन्नशरीरं संग्रामभूमौ पतितन्दृष्ट्वा। राजोवाच। हे सात्विक धन्य कार्णाटकुलप्रतिष्ठाबीजाङ्कुर जीविष्यसि मल्लदेव उवाच। कश्चिदावयोः केनजितं युद्धम्। राजोवाच। भवता जितम् मल्ल देवउवाच कथमिद न्निर्धारणीयम् राजोवाच ॥ अस्माभिः कृतसंग्रामो

भाषानुवाद।

ततय एकाकी मल्लदेव कुमार शरधारासौं सुभट गणक संहार कएल घयल नहिपडलाह सेदेखि जयचन्द्र राजा वजलाह रेरे वीर जौं जीवयित मृतावस्थ मल्लदेव कां नहिं पकडि सकैत छैं तौं मार मार हजार २ शर मल्लदेव कां तेहनेभेल शरविद्ध शरीर रणधीर वीर कुमार मल्लदेव हस्तो परसौं भूमिमे खसलाह ताहि समयक को नोकविवचन जेहन

दोहा।

वर्ष अधिक चिक्कोर नृप गेला पड़ाय सभीति।
सोडह वर्षक लड़ि पडल मल्लदेव रण प्रीति ॥ ११ ॥

राजा जाय शरसौं जर्जर शरीर संग्राम भूमि पडल मल्लदेवकां देखि कहलहे सात्विक धन्य कार्णाटकुल प्रतिष्ठा बीजाङ्कुर जिवयितछी मल्लदेव कहल हेराजा दुनु गोटा में के संग्राम जितल राजाउत्तरदेल अपनहि मल्लदेव कहल हे राजा हमहिं जितल सेअपनें कोनतरह निश्चय कयल राजा उत्तर देल।

दोहा

अंह कुमार एकसर समर हमर बहुतबलजाय।
जीतल नहि हारल बुझल विजयी अहसे न्याय ॥ १२ ॥

यद्येको बहुभिर्हतः । जिगीषति तथाप्यस्मान् कथन्न विजयी भवान् १२ ॥ तत स्तेन राज्ञः प्रशंसावचनेन पुलकितबाहुमूलो मल्लदेवोऽब्रवीत देव जीविष्यामीति तदनन्तरन्तु शौर्य्य परितुष्टेन जयचन्द्रेण राज्ञा सुकुमारः शरानहृत्यस्वस्थानन्नीतः पुत्रप्रेम्णा परिपाल्य व्रतेषु निर्व्वाणेषु प्रतिपूज्य प्रतिनिधीकृतश्च । तच्छौर्य्यं मल्लदेवस्य सविवेकस्य भूपतेः । भूते भाविनि वा काले न जातो न जनिष्यति ॥ १३ इतियुद्धवीरकथा ।

अथसत्यवीरकथा । कलौ कामादिभिर्युक्तो मानवोऽनृतवागपि । सत्य वीरकथां श्रुत्वा सर्व्वपापैः प्रमुच्यते। १ पुरा हस्तिनापुरनाम्नि नगरे मह मंदनामा यवनेश्वरो बभूव तस्मिन्नासमुद्रधरणीवलयं शासति तदुत्कर्षा सहिष्णुः काफरराज स्तमभियोद्धुं सकलबलसहित स्तत्राजगाम यवनेश्वर स्तमायान्तं ज्ञात्वा काम्बोजैस्तुरगै स्तरलै रश्ववारै र्व्वङ्गभि

भाषानुवाद ।

तयय राजा जय चन्द्रमहाराजक प्रशंसा वचन सुनि पुलकित बाहु मूल मल्लदेव कहल हे महाराज हम जिवयित छी तखन जयचन्द्र महाराज श्रर तनिक शरीर सौं बाहर कय आदर दय पुत्रप्रेम प्रतिपालन कय जब गेलथिनि अपना स्थान कतोक दिनें शरव्रण छुटला सौं बहुत आदर सौं अपन प्रतिनिधि राजा कयल ॥

दोहा ।

मल्लदेव सम शूरता नृपतिक सदृश विचार ।
भेल न होयत वा कतहु वर्त्तमान संसार ॥ १३ ॥

अथ सत्यवीरकथा ॥

दोहा

कलिकामादिक युक्तनर मिथ्या वचनककूट ॥
कथासत्यवीरक शुनथि सकलपापसों छूट ॥ १

पूर्व्व हस्तिना पुर नगर में महम्मद तुगलक नामक बादशाह होइत भेलाह आसमुद्र पृथिवीक राज्य शासन करयित छलाह तनिक उत्कर्ष नहि सहि सकला काफर राज तनि कों सों युद्धार्थी सेनासहित तखन जाइत भेलाह यवनेश्वर तनिकों आयल जानि काम्बोज आदिदेशीय अश्व बहुत लयो ओ अश्ववार परिवारित नगरसों

लक्षैः परिवारितः पुराहहि ब्भूय तेन समं सङ्ग्राम मङ्गीचकार तदुभय बलसमारब्धसंग्रामे बलीयसा काफरराजसैन्येन हन्यमाना यवनयोधा रणात् पराङ्मुखा बभूवुः। ततस्तादृशं सिंहभयार्दित मिव करियूथं पलायमानं निजयूथ न्दृष्ट्वा यवनेश्वर उवाच॥ रे रे मम सैन्यसुभटा राजानो राजपुत्राश्च युष्माकम्मध्ये कोपि तथा नास्ति यइदानीं रिपु भयभग्नं मम सैन्यं स्वेन बाहुबलेन चण मवलम्बते तद्यवनराजवचनं श्रुत्वा कार्णाटकुलसंभवो नरसिंहदेवनामा चौहानकुलसम्भवः चाचिक देवनामा च कुमारौ प्रोचतुः। राजन् कइदानीं निम्नाभिमुखं पततः पाथस इव रिपुत्रासभग्नस्य भवद्बलस्यत्राता भवतु यदि चणं प्राप्तत्य भवा न वलोकते तदा वा मेव भवतो विपक्षबलं खड्गधारापरिच्छिन्नशिरस्कं करवावः॥

यवनराजउवाच। साधु कुमारौ युवाभ्या मन्यः कएतादृशं व्यवस्यति ततोनरसिंहदेवः पुलकिताञ्चितबाहुमूलः कुलिशपातानुकारिणा कणा

भाषानुवाद।

बाहर युद्धारम्भ करयित भेलाह। दूनू गोटाक महादल परस्पर खड़ल भिड़ल संग्राम में कटि कटि खसल परस्पर प्रबल काफ़र राजक सैन्य सौं महमद योधा संग्राम त्यागि पड़ायल जेहन सिंह भयार्दित हस्तीक यूथ हो। सैन्य अपन तेहन देखि यवनराज बजलाह रे रे हमर सैनिक राजा ओ राज पुत्र केओ नहि तेहन सुपुत्र जे हमर सैन्य पलायित कां अपन बाहुबल सौं चण अवलम्ब नहि दय सकैछ तथाविध यवनाधिपक वचन सुनल १ कार्णाट कुल संभव नृसिंहदेव ओ चौहान कुल संभव चाचिकदेव नामा। दूनूवीर कहयलगलाह हे यवनेश्वर संप्रति नीचाभिमुख पतित जल प्रवाहसन शत्रु भय भङ्ग अपनैक सैन्य कां केत्राता होयत चण भूरि अपनै देखल जाय तौं हम दूनू जन शत्रु क सैन्य कैं तरुआरि मारि मारि छिन्न भिन्नकय देवनि मस्तक॥

यवन राज अत्यन्त हर्षित कहल साधु कुमार साधु युगल कुमार तोहरा दूनू जन बिना आनके एहन व्यवसाय काहस आरूढ होयत। ततय नरसिंहदेव रोमाञ्चित

घातेनतुरगं त्वरयित्वापरावृत्यातर्कित एव काफरराजबलं प्रविवेश प्रविश्य च जितकाशिनमायान्तं सितातपत्रपरिचितं काफरराजं भल्लेन हृदि हतवान् काफरराजस्तु गतप्राणो भूमौ निपपात चाचिकदेवेन भूमौ पतितस्य तस्य शिरश्छित्वा यवनराजस्य पुरोनीतम्। यवनेश्वरउवाच। कस्येदं शिरः चाचिकदेवः कथयति काफरराजस्य। यवनेश्वरउवाच। केनासौ हतः चाचिकदेवो ब्रूते राजन् पराक्रमतुलितपार्थेन नरसिंहदेवेन हतः। ततः पश्चाद्गामिना मया शिरश्छिन्नम्। यवनेश्वरः पृच्छति नरसिंहदेवः क्वच चाचिको ब्रूते काफरराजसन्निधानवर्त्तिभिः स्वामिवधामर्षितैर्म्महागोल सुभटैर्ब्बहुभि रेको हन्यमानो मया दृष्टः। इदानीं नस्ति तावन्न ज्ञायते ततो यवनराजः परसैन्यं हतनायकं पलायमानन्दृष्ट्वा परमसानन्दो बभूव पुरुषाँ स्तदनुगामिनः स्वसैनिकान्प्रत्याह रे रे मम सैनिकाः पलायमानान् परसुभटान् किन्निहनथ सम्प्रति ममराज्यरक्षितारं काफरराजकृतान्तं नररूपिणं सिंहमेव नृसिंहदेवं मे विज्ञापयत।

भाषानुवाद।

बाहुमूल वज्राघातक अनुकरण सन कोड़ा घोड़ा कैं मारि प्रबल वायु सन नचवयित घुरि फिर अतर्कित काफर राज गोल मैं प्रवेश करयित भेलाह अवइत यवनेश्वरक विजयाभिमानीश्वेत छत्र सौं शोभित परिचित काफर राजक हृदय मैं शाङ्गिमारल काफरराज निःप्राण खसलाह संग्राम भूमि मैं चाचिक देव बहुत चपलतासौं भूमि निपतित तनि काफर राजक शिर तरुआरि सौं काटि यवनेश्वर की जाय देखायोल। यवन राज कहल। ककरथिक ई शिर। चाचिक देव कहल काफर राजक यवन राज पूछल ककरा सौं ई निहत चाचिकदेव कहल हे यवनेश्वर अर्ज्जुनपराक्रम नरसिंहदेवसौं तनिक पाछा हम छलहु से शत्रुक माथ काटि अपनैंक आगां लायल छी। यवनराजा पुछल नरसिंह देव कतय चाचिक देव कहल काफर राज निकट वर्त्ती स्वामिवधामर्षी महागोल सुभट अनेकसौं एकाकी संग्राम करयित छोड़ि हमअयलहु सम्प्रति कतय छथि से हमरा निश्चयनहि तखन यवनराज काफर राजक सैन्य अनायक पलायमान देखि परम आनन्द भेलाह कतेक सैन्य पड़ायल शत्रुकैं मारयित देखि यवन राज कहल संग्राम सौं पलायमान पर सैन्य की। कौं नाश करै छहु सम्प्रति हमर राज्य रक्षक काफर राजक यम समान नर रूप सिंह नरसिंह कैं देखावह जे कतय छथि॥

तदनन्तर मेकत्र संग्रामप्रदेशे बहुतरनाराचभिन्नशरीरं बहुरुधिरधारासहस्रं पुष्पितं किंशुक मिव वेदनामूर्छितं नरसिंहदेवं यवनराजो ददर्श तुरङ्गादवतीर्य्य बभाषे हे नरसिंहदेव जीविष्यसि नरसिंहदेव उवाच । राजन् मया यत्कृतं तदवगतम्भवता यवनेश्वर उवाच ज्ञात मयां कथितं चाचिकदेवेन त्वया मम शत्रुर्हतः । नरसिंहदेव उवाच । तर्हि जीविष्यामि ॥ यतः । स्वीकृतं दुष्करं कर्म्म मया यस्य हितेच्छया । तेन विज्ञायमानोमे फलितः श्रमपादपः ॥ २ ॥ ततस्तस्य शरीरा द्वाणं खनिमग्ना न्नाराचानुद्धृत्य यवनराजस्तं कुमारं नानाभेषजप्रयोगेण नियमेनच । स्वल्पै रेवच दिवसै र्निर्व्वाणव्रण मचीकरत् । तदनन्तरं सहस्रसंख्यै स्तुरंगै र्लक्षसंख्यैश्च काञ्चनै श्छत्रै श्चामरादिभिश्च तं पुजयितु मुपचक्रमे । प्रसादावसरे नरसिंहदेव उवाच । राजन् राजपुत्राणां युद्धं स्वाभाविक एव धर्म्मः तत्किमद्भुतं कृतम्मया । यदि

भषानुवाद ।

ततय एकत्र संग्राम प्रदेश मे बहुतर शर बेधित शरीर बहयित शोणित सहस्रधार पुष्पित पलाश समान वेदना मूर्छित नरसिंह देवकां यवनराज देखल घोड़ासों उतरि समीप जाय पुछल हे नरसिंह देव जिवयितशो अहां । नरसिंह देव कहल हे यवनराज हमर रण वीरता काज अपनैं कां ज्ञात भेल । यवनराज कहल जानल चाचिक देव कहल अहां हमरशत्रुक संहर्त्ता भेलहु नरसिंह देव कहल तौं जिवयितछी ॥

सोरठा ॥

कठिन कर्म्म स्वीकार जनिकर कारण कयल हम ।
से जानल श्रम भार श्रम तरुवर मानल फलित ॥ २ ॥

ततय तनिक शरीर सौं पुंख पर्य्यन्त गड़ल शर बाहर कयल यवनराज कुमारस कुमार कां नाना नियम औषधी सों अल्पदिनहि मैं शरव्रण छोड़वायील तदनन्तर हजार घोड़ा सहस्रसवर्ण छत्र चामरादिसौ सत्कार करय लगलाह तथा वृत्त प्रसन्नता अवसर मैं नरसिंह देव बजलाह हे महाराज राजपुत्रकां संग्राम सहज स्वभाव धर्म्म

यं मम पूजा क्रियते, यदि पूजैव कर्त्तव्या तदा चाचिकदेवस्य क्रियताम येन रिपुशिरोप्यानीय सत्यरक्षार्थाय तेन भवतः पुरस्तान्मम यशः प्रकाशितम् स्वपौरुषञ्च ख्यातम् अन्यथा नेन नीयमानं मारणचिन्हं रिपुशिरो दृष्ट्वा कोवाधि गमिष्यत यन्मया मारितो रिपुरिति तदय मेव प्रथमं पूज्यताम्। चाचिकदेवउवाच। कुमार नरसिंह मा मैवं ब्रूहि कथमहं तव पराक्रमफल मादाय परोच्छिष्टजोवी भविष्यामि। नरसिंहदेवउवाच। साधु सत्यवीर साधु। अनेन तव सत्येन सर्व्वमेव दिवे चितम्। महेच्छोसि विदग्धोसि सतीपुत्रोसि चाचिक ॥ २ ॥ ततस्तयोः परस्परालाप मा कर्णयता समुपजातपरितोषेण यवनराजेन द्वावपि कुमारौ तुल्य मेव सत्कृतो। इतिसत्यवीरकथा ॥

भाषानुवाद।

थीक की हम अद्भुत कर्म्म कयल जे हमर सत्कार अपनैं नाना वस्तु सों कयल जाय त। जौं सत्कार कर्त्तव्य प्रभु रुचि हो तौं चाचिक देवक कयल जाय। जे शत्रुक शिर आनि सत्य रक्षार्थ अपनें क आगां हमर सुयश प्रकाशित कयल अपन पौरुष ख्याति नहि कयल के मानैत जे हम शत्रु कैं मारल तथाविध चाचिक देव द्वारा शत्रु मरण चिह्न देखि के विश्वास करैत हमर मूरलक तैं प्रथम पूजनीय चाचिकदेव थिकथि। चाचिक देव कहल आः नरसिंहदेव एहन नहि कहक कोनगत हम अहंक पराक्रम फल लय परोच्छिष्ट जीवी हयब नरसिंह देव बजलाह साधु सत्यवीर साधु।

सोरठा॥

कयलहु सकल विचार। एतवहि वचनहि सौं अहक ॥
जानि महेछ कुमार। सती पुत्र चाचिक अहां ॥ २

परस्पर दूनू कुमारक आलाप शुनि शुनि पुनि मन अत्यन्त परितोष सौं, तुल्यसत्कार कयल युगल कुमारक यवन राज ॥

इति सत्यवीर कथा।

अथ प्रत्युदाहरणकथा । विवेकेन विना चौरो विना शौर्य्येण कातरः
अलसस्तु विनोत्साहं लोके मर्त्योऽभिजायते । १ प्रथमं चौरकथा ।
दयादानादिभिस्त्यक्तो विवेकप्रभवैस्तु यः । चौर्य्यञ्चापि भवेत्तस्य कुवृ
त्ते रेव कारणम् ॥ २तद्यथा । विवेकेन विना शूरः पाप माचरति ध्रुवम्
पण्यकर्म्म समर्थोपि यथा चौरः सरीसृपः ३ ॥ आसी दुज्जयिन्यां पुरि
विक्रमादित्यो नाम राजा सचैकदा चौरव्यापारकुतूहली रंकवेषं
परिगृह्य निजनगर एव देवतासन्निधाने तस्थौ तत्रच तमस्विन्यां रा
त्रौ निशाभागे चत्वार श्चौरा स्समागत्य मन्त्रयामासुः । यदिदं गृहादा
नीत मन्न मत्र भुक्त्वा प्रवृद्धबलाः पुरं प्रविशामः । विक्रमादित्य उवाच
तदुच्छिष्टं मह्यं दास्यथ चौरा स्सवितर्क माहुः । अये कस्त्वम् । राजो
वाच । रंकोहं क्षुधाकुलितो गन्तु मसमर्थः पतितस्तिष्टामि ॥ चौरा
ऊचुः । हूं नगरपथशोधनसमये दिवा प्यस्माभि र्दृष्ट एवाय मंच रे

भाषानुवाद ।

प्रत्युदाहरणकथा ॥

सोरठा ॥

विनु विवेक जन चोर कातर हो शूरत्व विनु ।
नीति शास्त्र कर घोर आलसि हो उत्साह विनु ॥ १ ॥
दया दान सौं त्यक्त प्रथम विचारी त्यन्नसौं ।
चौर्य्य कर्म्म आसक्त होजन कुत्सित वृत्तिसौं ॥ २ ॥
विनु विवेक सौं शूर निश्चय कर पापा चरण ।
शूर कर्म्म परि पूर जेहन सरीसृप चोर छल ॥ ३ ॥

छलकथि उज्जयिनी पुरी मैं विक्रमादित्य नामक राजा ओ एक समय चोर दर्शन
कुतूहलोरंक वेष धारण कय अपनहि नगर मैं देवतालय समीपजाय रहलागय तत
अन्ध कारिणी रात्रि निशा भाग विषय चारि चोर आवि विचार करयितभेल घर
सौं जे खाधक लायलछी से एहीठाम खाय वलिष्ठ भय नगर प्रवेश करव विक्रमादित्य
कहल वाकू दातालोकनि से उच्छिष्ट हमरहु सेहत चोर तर्कवितर्कैं वजलाह अओ
के अहां विक्रमादित्य कहल हम कङ्गाल यिकहु बहुतहु धातुर एहिठामसौं नहि जाय
होइक लटुआएल पड़लछी चोर कहल हं नगरमैं वाट घाट गमयित समय ईरंक नि

रंक काथ मिदानीं सप्यचैव तिष्ठसि। राजोवाच ॥ देवयात्राप्रवृत्तलोक मुद्दिश्य भिक्षार्थं मह मया गतोस्मि कुत्राप्यन्न याश्यामि भिक्षा मनासा च बुभुक्षितः पतित स्तिष्टामि। चौराऊचुः ॥ यदि तुभ्य मुच्छिष्ट मन्नं दास्यामः तदा किन्नः प्रयोजनं करिष्यसि। राजोवाच ॥ तुंगं तुंगं ध निकगृहं दर्शयाम्मि चोरितवस्तुभारञ्च वोढास्मि ॥ चौराऊचुः ॥ तत स्तिष्ठ ग्रहिष्यच्छु च्छिष्ट मन्नं ततः कृत भोजनै श्चौरै र्दीयमान मुच्छिष्टं कर्प्परे कृत्वा वेतालेनापहारयित्वाच। राजोवाच। अद्याहं कृता र्थोऽस्मि युष्माकं प्रसादेन ॥

तत स्तेषान्मध्ये सरीसृपनामा मुख्यचौरोऽब्रवीत् यदहं शाकुनिक शास्त्रे कृतश्रमोस्मि ततः शृगालाः किंवदन्तीति जानामि। इतरऊचुः। जानीहि। सरीसृपउवाच। सखायः युष्माभिः श्रूयतां शृगालो वदति युष्माकंम्मध्ये चत्वारश्चौराः। एकोराजास्तीति। तऊचुः। वयं परस्पर

भाषानुवाद।

अय लोचन गोचर भेल कल दिनमें सेह थिक एतहु। चोर पुछल रे रंक कोना सम्प्रति एतय रहयित छें। राजा कहल देव यात्रिक जे लोकअवैछथि तनिलोककदान प्रत्याशावशसेह उद्देशकय अय लहु भिक्षा प्राप्ति नहिभेल बुभुक्षित पड़लछी की करु दाता। चोरपुछल रेरंकतोहराजों जुष्ट देवहुतौं तो हमर कोन कार्य्य करवह विक्र मादित्य कहल वड़ा वड़ा धनीघर देखाएव औ चोराओल वस्तु सेहो ढोएव चोर कहल रहह भेटतौह ऐंठ जूठ अन्न कयल भोजन चोर सभजन उच्छिष्ट अन्न खपर परदय सोर कय देल ओ उच्छिष्ट रे रंक राजा से अन्न वेतालद्वारा चोरवाय फेकवाय देल कहल आज हम कृतार्थ भेलहुं अपने सवहिक प्रसाद सों

ततय सभचोर में मुख्य सरीसृप कहल जे हम शकुन शास्त्र बहुत श्रमसों पढ़ल शृगाल की वजैछ से हम बुझैछी आन तीनू जन कहल नीक नीक बुझू बुझू सुनू मित्र शृगाल वजैत अछि तोहरा सवहिमें चारि चोर ओ एक जन राजा छथि तीनूजन चोरक हल हमरा सवहि चारू जन परस्पर चिनहारे छी पाञ्चम रंक दिनक चिनहारे एखन

चत्वारोऽपि परिचिता एव यस्मोऽहोरात्रोदिवापि दृष्टोऽप्युच्छिष्टग्राही
दृश्यति ततः कृता राजशंका सरीसृप उवाच ॥ शृगालभाषितन्न मिथ्या
भवति ॥ तऊचुः ॥ प्रत्यक्षबाधितेऽर्थे का दुश्शंका ततोवाकोवाकं कृत्वा
पञ्चापि पुरुषाः पुरं प्रविविशुः । पुरपतिगृहे सन्धिं कृत्वा बहूनि धनानि
चोरयित्वा नगराद्बहिरागत्य गर्त्ते चिक्षिपुः । चौराश्चत्वारोऽपि सरसि
कृतस्नानाः पुनर्नगरमागत्य मदिरागृहं विविशुः । राजापि स्वीय
मागारमाजगाम तदनन्तरमास्थानमण्डपे सर्व्वावसरं कृत्वा सिंहास
नोपविष्टो दण्डनायकमाहूयाऽऽदिदेश । राजोवाच । अये परलचक
त्वमाज्ञापालकोऽसि न जानासि किमपि रात्रिचरितं गच्छ तावदिदानीं
चत्वारश्चौराः पिचिण्डिलनाम्नश्शौण्डिकस्य गृहे मद्यं पिबन्तस्सन्ति
तान्शृङ्खलाबद्धान्कृत्वा सत्वरमानय दण्डनायकः प्रणम्य गत्वा तथा
कृतवान् । राजोवाच ॥ रे रे सखायश्चौराः परिचिनुथमाम् ॥ सरी
सृप उवाच । देवमया तदैव परिचितो भवान् किन्त्वमी सखायः परम
दुष्टाः शृगालस्यापि कथितमतथ्यञ्च निर्द्धारितवन्तः किमहं करोमि स

भाषानुवाद ।

इ मांगि २ अैंठ जूठ महा आनन्द सौं खाय हर्षित अछि ततय कोन तरह राज शंका
सरीसृप कहल अओ बाबू लोकनि शृगाल भाषित मिथ्या नहि होएत ओ तीनजन
कहल आः प्रत्यक्ष बाधित अर्थमें की दुश्शंका किछु काल वाकोवाक कय पांचो गोटें
नगर प्रवेश कयल पुरपति गृहमें सिन्धि दय बहुत धनचोराय नगर बाहर जाय खाधि
कोड़ि गाड़ि दैतभेलाह चारूजन चोर सरोवर में स्नान कय भलमानुष बनि मदा का
रकगृहमें पहुंचलाह गय राजा अपन मंदिर जाइतभेलाह तदनन्तर सभामन्दिरमें
सर्व्व अवसर कय सिंहासन पर बैसि दण्ड नायकके बजाय आज्ञा दयित भेला अओ
परलचक अहां हमर आज्ञा पालकछी जनयितछी गतरात्रि चरित्र जाउ २ एखन चा
रू चोर पिचिण्डिल नामक शुण्डिक गृहमें मद्यपान करयितअछि इनि चारु चोर कां
शृंखला सौं संयमित कय शीघ्र एतय लाउ दण्ड नायक प्रणाम कय जाय तेहने कयल
धयल आयल चारू चोर राजा कहल रे रे हमर मित्र हमरा चिन्हैत छें सरिसृप
उत्तर वाजल हे महाराज अपनेकां चिन्हल हमते छिखन किन्तु हमर संगी दुष्ट शृगाल व
चन बुझलक्क मानलक नहि हम कौनक्क सखाक वचन सौं अभाव भानभैगेलाह जेहन ।

र्विवचनैः प्रमत्तोऽस्मि तथाहि ॥ एक एवच नीतिज्ञः कर्म्म कृत्वा सुखीभवेत् । बहूनपेक्ष्यमानस्य स्थानात्प्रच्यवते मतिः ॥ ४ ॥

ज्ञातसारोपि शूरोऽपि पण्डितोऽपि क्रियोद्धुरः । निमज्जति महाराज बहूना मतिकर्दमे ॥ ५ ॥ राजोवाच ॥ रे रे चौराः परोपदेशपरिग्रहजं निजप्रमादं शोचथ ॥ स्वज्ञानदोषजकथा न शोचथ । चौराऊचुः ॥ कोऽस्माकं ज्ञानदोषजप्रमादः । राजोवाच । स्फुटएवायं युष्माकं प्रमादोऽस्ति यद्वीरवृत्तिसमर्था अपि चौरवृत्ति माश्रयथ । तथाहि येनान्ये प्रभवन्ति भूमिवलये नन्दन्ति लक्ष्मियः पुण्यम्य खण्डितमण्डलीषु परितः शुद्धं लभन्ते यशः । तेनैव स्तुतिसाधकेन महता शौर्य्येण निन्दास्पदं यूयं गच्छत चौरतां भुवि कथं हादुस्त्यजा दुर्म्मतिः ६ । चौराऊचुः । देवदुर्म्मतिरेवात्र कारणम् । राजोवाच ॥ यद्येवं स्वीकुरुथ तदा किन्न त्यजथ तां दुर्म्मतिम् । चौराऊचुः । देव दरिद्रता तत्परित्यागप्रतिबन्धिका । यतः ।

भाषानुवाद ।

सोरठा ॥

एके जन नय वान सुखित होयि कयि कर्म्म काय ॥
बहुत अपेक्षा वान मति न रहय स्वस्थान पर ॥ ४
क्रिया कुशलता पाय ज्ञातसार ओ शूरहो ।
बहुमति कर्दम जाय महाराज शुनु फसथि से ॥ ५ ॥

राजाकहल परोपदेश परिग्रह उत्पन्न अपनप्रमाद शोच करयित छैं अपन दोषउत्पन्न कथाक नहि शोच ।

चोरकहल कोहमरा सभकां दोषउत्पन्न प्रमाद राजाकहल स्पष्ट तोरासवहिक प्रमाद छैकीशुन वीरवृत्तिमें समर्थ तथा पि चोर जीविकाक आश्रयण करैछें ॥

जेहि सों प्रभुता पावथि आन । महिमें हर्षित लक्ष्मी वान ॥
पण्डित मण्डलि मैं यशवेश । पुण्य कर्म्म फल ख्यात सुदेश ॥
सेस्तुत्ति साधक शौर्य्य विशाल । निन्दास्पद तोंहसभ एहि काल ॥
जायित छै की चोर कहाय । हा दुस्त्यज दुर्म्मति का पाय ॥

चोर कहल हे महाराज एहिठाम दुर्म्मति सैह कारण, राजा कहल जौं एहनि मति होइछौ तो दुर्म्मति त्याग नहि करै छै चोर उत्तरदेल दरिद्रता दुर्म्मति त्याग में प्रति बन्धि का

पापे नियोजयति भोजयतीह दुःखं स्तेयञ्च कारयति शाठ्य मुपानयन्ती दीनञ्च वाचयति याचयति च हीनं किन्नैव कारयति हन्त दरिद्रतान्धः॥७

राजोवाच ॥ रे युष्माकं दरिद्रता तदैवगता यदा मया सह सखिभावो जातः सखिभावस्तु तुल्यप्रतियोगिक एव संभाव्यति कथं युष्माकं सख्य मालम्ब्य चणमहं चौरतां गतोऽस्मि कथं मम सख्येन यूयं राजतान्न यास्यथ तदद्योऽपि परिहर दुर्म्मति मिमाम् ॥

चौराऊचुः। कथन्नत्यजामः। राजोवाच ॥ इदानीं शृङ्खलबद्धा यूयं किन्न स्वीकुरुथ तथाहि। आक्रमे पतिता दुष्टा जिह्वाग्रगतयागिरा। दूषणं किन्नमुञ्चन्ति किन्न गृह्णन्ति वा गुणम् ॥८॥ अथवा पुनर्यदि

भाषानुवाद।

शोरठा

पाप संगल पटाव तस्कर कर्म्म करावसे ।
दुःखक संग मिलाव शठता मनमे लावएनि ॥ ६ ॥
दीन वचन कहवाव याचन करवै हीनसौं ।
कीकी हान कराव प्रबला हमर दरिद्रता ॥ ७ ॥

राजा कहल अरे तोहरा सवहिक दरिद्रता तखन हि गेली जखनहि हमरा संगैं मैत्री भेलौ मैत्री प्रायः समानहि मैं होइछ कोना हम तोहरा सवहिक मैत्री सैं चोरत्व पायोल कियैक नहि तोहरा सवहि हमर मित्रता सैं राजताकों पयवह आवहु त्याग करहु दुर्म्मति

चोरकहल कियैक नहि त्यागव राजाकहल एहिखन शृंखल बान्धल कियक नहि स्वीकार करैछै।

शोरठा ॥

दोषनकरकौ त्याग दुष्टपराभव पड़लमे ।
ग्रहणन गुण अनुराग जिह्वाअग्रस्थित वचनैं ॥ ८ ॥

कुवृत्तिं कुरुथ तदा पुनरिमामेव दशां प्राप्स्यथेत्यभिधाय पुरपतिधनं पुरपतेर्दापयित्वा सराजा चौरान्मुमोच। तेषाम्मध्ये सरीसृपनामानं मुख्यचौरं शाल्मलिपुरे राजानञ्चकार तदितरचौरान् काञ्चनैरदरिद्रीकृत्य करुणया कुतूहलेनच प्रस्थापयामास ततष्कियताऽपि कालेन तेन राज्ञा चिन्तितम्। यस्सरीसृपो मया राजाकृतः सचौरो राजपदवीं प्राप्य किमिदानीमाचरतीति निरूपणीयम्मइति। यतः। दुर्ब्बलस्य गुरुर्भारो दुष्टाग्नेर्गुरुभोजनम्। राज्यं गुरुच दुर्ब्बुद्धेःपरिणाम सुखंकुतः॥८। ततस्सराजा सुचेतनन्नामानं चारपुरुषं प्राप्तराज्यस्य चौरस्य निरूपणाय प्रस्थापयामास। चरस्तुतत्र गत्वाऽधिगतसर्व्ववृत्तान्तः पुनराजगाम राजोवाच। सुचेतन वार्त्तां कथय। चरउवाच। देवभवतः पथ्यमपथ्यञ्चेति नाहं विचारयामि तथ्यं कथयामि अलीकभाषणन्नोचितं चारपुरुषस्य॥

भाषानुवाद॥

पुनजौं कुवृत्ति करवह तौं एहिदशा प्राप्तिहयतौ। ईकहि पुरपतिक धन पुरपतिकौ दियाय से राजा चोरसभका छोड़ि देल ताहि मध्य सरीसृप नामकमुख्य चोरकैं शाल्मलिपुरक राजाकयल ताहिमैतीनका बहुत धनदय अव्ययकय दरिद्रताक भंजनकयल करुणाकुतूहलो राजा सभका विदाकयल। कतोक दिन गत सन्तासे राजा चिन्ता कयल सरीसृप चोरकौ हम राजाकयल सोराज पदवीपाबि कोहन आचरण सम्प्रति करै अछि सेजानक थिक

सोरठा॥

दुर्ब्बलकौ गुरुभार गुरुभोजन मन्दाग्निकौ॥
अन्त कतयसुखसार राज्य भार गुरुकुमतिकौ॥ ८।

ततय राजासुचेतन नामक चारपुरुषकौ पठवयित भेलाह प्राप्त राज्य चोरक चरित्र निरूपणार्थ। सेचतुर चर ततय जाय सभ वृत्तान्त जानि पुन अबयित भेलाह। राजा पुछल सुचेतन वार्त्ता कहु सुचेतन कहय लगलाह हे महाराज अपनैक पथ्य अपथ्य हमनहि विचारयिछी सत्य कहैछी मिथ्या भाषण चार पुरुषकौ विचारनहि थीक

तथाहि काणेन चक्षुषा जन्तुर्यथा किञ्चिन्न पश्यति ॥ न पश्यति तथाराजा चारेणानृतभाषिणा १० ॥ तदहं यथा दृष्टंतच्चरितं पद्यै रुप वर्णयामि शृणोतुदेवः ॥ एकस्मै कृपया तस्मै राज्यन्दत्वादुरात्मने । परा निष्टप्रवीणाय बहूनां विपदः कृताः ११॥ सुदुर्वृत्तः पुराप्यासीत् समर्थो भवताकृतः । दुर्वृत्तश्च समर्थश्च किन्नामन करिष्यति १२। कृपास्तिमि तचित्तेन भवताऽपि महात्मना । दुर्गतिः खण्डिता तस्य प्रकृति स्तुन्ख ण्डिता १३॥ यशः पुण्यंसुखञ्चेतित्रयं राज्यतरोः फलम् । तच्च नाप्नुवतस्त स्यकिं राज्येन प्रयोजनम ॥ १४ ॥ साधूनां हरती द्रव्यं हन्तिमानं मनस्वि नाम् । निजसौकर्य्यलोभेन किमकृत्यं दुरात्मनः ॥ १५ ॥ रमतेच

भाषानुवाद ।

शोरठा ॥

जेहन आंखि कनाह जन्तुनदेखथि वस्तुकिछु ।
तेहन भरणी नाह मिथ्याभाषी चारसौं ॥ १० ॥

ततय जेहनदेखल चोरचरित्र सेसुपद्यसौं कहैछी शुनल जाय महाराज ॥

दोहा ॥

परसन्तापी परकृपा देलराज्य सम्पत्ति ।
तनिकृतबहुतोलोकको कैलकिबहुतविपत्ति ॥ ११ ॥
पहिलें छलदुष्ट तवह प्रभुकय देलसमर्थ ।
ओदुर्वृत्त समर्थ पुनि कीनहि करैअनर्थ ॥ १२ ॥
कृपागार बड़मोटप्रभु दुर्गति खण्डनकैल ।
महाराज शुनु ज्ञनि प्रकृति अछह अखण्डितथैल ॥ १३ ॥
राज्य तरुकफल पुण्ययश सुखमयतोनिरुद्दर्थे ।
सैनहितनिकौ प्राप्तजो प्राप्तराज्यतौ व्यर्थ ॥ १४ ॥
साधुक धनहरकरअनय हरयमनस्विकमान ।
निजसुख लालचकौनकर दुष्टात्माकुध्यान ॥ १५ ॥
परवनिता सों नियतरत थिरतर जीवनलेख ।
कामअस्त देखथिनयन यमकअस्त नहिदेख ॥ १६ ॥

परस्त्रीभिः स्थिरंजानाति जीवितम् । पश्यन्नपिच कामान्धं यमस्यास्य न्नपश्यति ॥ १६ ॥ नावसीदति पापेन लज्जा तेनापकर्म्मणा । नतृ प्यति परस्वेन बत्सरस्य कुतो घृणा ॥ १७ ॥ ब्रवीति चौरवृत्त्याहं ग तोऽस्मि राजतायंत्रया । त्यजामि केन दोषेण ता मात्महितकारिणीम् ॥ १८ ॥ राज्यं भवति दुर्व्वृत्तेरित्यर्थ मिति तत्परः ॥ स्वयंपचश्च दृष्टान्तो दुर्व्वृत्तिन्नैवमुञ्चति ॥ १९ ॥ अपि द्विपघटाकीर्ण मपि रामाशता न्वितम् । विवेकेन विना राज्यं शोभते न दुरात्मनः ॥ २० ॥ शिवस्य म पिना ग्राह्यन्नावद्ब्राम्हाण्णणाऽपि । दस्यौ शासतिभूभागं मुने रपिन मान्यता २१ ॥ स्वकृतानिच कर्म्माणि स्वयमेव विलुम्पति । तृष्णोप प्लुतचित्तानां स्थैर्य मात्मकृतेकुतः ॥ २२ ॥ राजोवाच ॥ सुचेतन एभिः

भाषानुवाद ।

नहि डराय से पापसों अपकर्म्मकतहिलाज ।
परधनसों मन तृप्तनहि कतयघृणा खलकाज ॥ १७ ॥
कहयचोरिसों राज्यहम पायौल करवकित्याग ।
हेउपकारिणि त्यजवकी दोषन मनमेंलाग ॥ १८ ॥

शोरठा ॥

त्यागनकुमतिनितान्त कहथिचोरहर्षितरहथि ।
श्चपनहि में दृष्टान्त राज्य प्राप्तदुर्व्वृत्तसों ॥ १९ ॥

दोहा ॥

वर गजेन्द्रस्त्रीरत्नयुत श्रेष्ठ राज्य कोपाव ।
शोभाहीन दुरात्मको जों विवेक नहिआव ॥ २० ॥
नहिधवध्य ब्राह्मण जतय नहि शिवस्व अग्राह्य ।
चोरनृपति मुनिकोविपति धर्म्म कर्म्मसों वाह्य ॥ २१ ॥
सुकृत कर्म्म श्चवटाश्चपन दुर्ज्जन करथि विनाश ।
तृष्णा वाठलिको कतय श्चात्मा सुखक विलास ॥ २२ ॥

पद्यै स्तस्य दुरात्मन श्चरितं विदित्वा दुःखस्थोऽहं मन्ये ममापि दुरकीर्त्तिरियम् ॥ चरउवाच ॥ दुरकीर्त्तिर्भवत्येव यतः परितो लोकाः पठन्ति ॥ सा लज्जा साहसाङ्कस्य चौरराजस्य तद्यशः । यत्तयोः स्फुटतां यातस्सखिभावः परस्परम् ॥ २३ ॥ हीनसम्बर्द्धनासक्तो हीयते हिमहानपि । मृगमङ्के समारोप्य लेभेचन्द्रः कलङ्किताम् ॥ २४ ॥

राजोवाच ॥ तत्किमुचितमिदानीम् । चरउवाच ॥ देवमहतोऽपयशस्तवनिवारणीयम्भवति तदीयत्वक्षणपर्य्यन्तं सुखापनेय मस्ति जनानने मुलङ्घपदा दुरकीर्त्तिर्दुरपनेया भविष्यति ततो विक्रमादित्येन प्रच्छन्नवेषप्रधारिणा चौरस्य राज्यं गत्वा चरवचनं परीक्षितं । पश्चाच्चौरोराजपदा दवताय्य पूर्व्वामेवदशां प्रापितो हतश्च ॥ श्लोकास्तु ॥ उक्ताश्चाऽस्तु

भाषानुवाद ॥

राजाकहल । सुचेतन एहि पद्य सों ताहि दुरात्माक चरित जानि हम दुःख निमग्न भेलहुँ हम तर्क करैछी हमरे ई अकीर्त्ति थिकि चरकहल दुष्टाअकीर्त्ति अपनहीके हेत जे सर्व्वत्र लोक ई पढैत अछि ॥

दोहा ॥

चौरराज कों से सुजस साहसाङ्कके लाज ।
मित्र भाव नृप चोर कों कैवल कहय समाज ॥ २३ ॥
अकुलीनक संसर्गसों हानि महानहु आव ।
मृगरक्षण सौं तदक्षणहि शशीकलंकि कहाव ॥ २४ ॥

राजा पुछल ततय की सम्प्रतिकर्त्तव्य सुचेतन कहल महाराज महानहुकों अपयश अपनेंसों निवारणीय थिक एखन धरि अल्प प्रयास सौं छुटि सकैछ जखना देश देश लोकक मुख आरोपितचरणाअकीर्त्ति होइति तखन कठिनसों छोडाओल जायिति ततय सेसुनि विक्रमादित्य प्रच्छन्न वेषधारी चौरक राज्यजाय सुचेतननाम चारक वचन परीक्षा कयल यथार्थ २ जानि पश्चात् चोरकों राजपदसों उतारि पूर्व्वदशासम्प्राप्तिकयमारल

पुरी पराविद्दिजनो धत्तां गुणै गौरवं स्वैरं सम्प्रति सञ्चरन्तु वणिजो मार्गे विमुक्तापदि ॥ निद्रान्तु प्रति मन्दिरञ्चधनिनो जागर्त्तु धर्म्मोत्सव स्साधुर्द्रं पिषि सापराधरिपुणा चौरे हते भूभुजा ॥ २५ इतिचौरकथा ॥

अथ भीरुकथा ॥ पुमान् शौर्य्यविहीनस्तु कातरः कथ्यते बुधैः । सप्राणकातरो भीरुः कृपणोधनकातरः १ ॥ अपदिप्यापदाशंकास्तोकबुद्धिर्न्निजेवले । अभीमे भीमसंवित्तिर्भीरोस्सञ्चैव जायते ॥ २ ॥ बभूव गंगादक्षिणकूले पारिभद्रोनाम राजा सच प्रकृत्याभीरुः पितु रूपार्ज्जिते राज्ये मंत्रिभिः

भाषानुवाद ॥

षटपद ॥

रहित व्याधिसौंपुरी　वृद्धपण्डित जनमानथु ।
चलथु वणिक स्वछन्द　सुपथ अतिनिर्भय जानथु ॥
करथु धनिक सुखशयन　सकल जागथु धर्म्मोत्सव ।
साहसांक नृपकयल चरित　तस्करमें अभिनव ॥
साधुद्रोहि अपकर्म्मरत　अतिशय निर्दयचोर छल ।
नाम सरीसृप ठग नहि　विक्रमनृपतनिकां हनल ॥ २५ ॥

इतिचोरकथा ॥

रूपमालाछन्द ॥

अथ भीरु कथा ॥

नामकातरतनिक जानव शूरताक विहीन ।
द्विप्रकारक होथि सेवुधकहल शास्त्रप्रवीण ॥
प्राण कातर होथि जेपुन सैहभीरु कहाव ।
धनक कातर होथि जेनर कृपण कठिन स्वभाव ॥ १ ॥
विनहि आपद आपद भय अपन बल वुझ अल्प ।
वुझथि भीम अभीमकां मन अवलता संकल्प ॥
अयश हो संसारमै वरुचारु कम्पित गाव ।
मलिनता नहि मनक त्यागथि वुझअपात्र सुपात्र ॥ २ ॥

क्रियमाणः प्रभुरभूत् ॥ पश्चात्तस्य भीरुत्वन्दृष्ट्वा सन्निकृष्टा राजानस्तद्भूमिसीमान माचक्रमुः ॥ यथा यथा शत्रवस्तस्य सीमान माक्रान्तवन्तस्तथातथा भूमिं परितत्याज तथाहि । यःशान्तप्रकृती राजा शौर्य्यशक्ति मदर्शयन् ॥ विना युद्धेन सन्धत्ते सोऽरिभिः परिभूयते ॥ ३ ॥ यतः । शत्रवः पिशुनारोगा स्वभावा दपकारिणः । अप्रतिक्रियमाणास्तु प्रभवन्तिपदेपदे ॥ ४ ॥ क्रमेण शत्रूणामाक्रमणस्तस्यराज्ञो भीरुता न्दृष्ट्वा । मन्त्रिणऊचुः । देव भवतः सहिष्णु तया भूमिराक्रान्तैव शत्रुभिः परिशिष्टरक्षार्थ मपिशक्तिर्दर्शयितव्या भवति राजोवाच ॥ काशक्ति र्दर्शयितव्या भवति मन्त्रिणऊचुः ॥ युद्धेन प्रभुशक्तिः ॥ राजोवाच ॥ प्रथमः सन्धिरेवक्रियताम् पश्चात कर्त्तव्य मेवयुद्धम् । मन्त्रिणऊचुः । यत्तदा कर्त्तव्यन्तदिदानी मेव कथन्न क्रियते अवश्यकर्त्त

भाषानुवाद ।

भेला गंगा दक्षिण कूलमें पारिभद्रनामक राजा से स्वभाव सों अतिभीरु पिता उपार्ज्जित राज्यमें मंत्रीसों कयल राजा कहवयित भेलाह पश्चाततनिक भीरुता देखि तनिराज्य सन्निहत राजा सीमा स्वाधीनकय लेलथिनि ॥ यथा २ तनिक भूमिसीमा हरण आन करथिनि तथा २ भीरु सीमा त्यागलहि जाथि ॥

शोरठा ॥

शान्त प्रकृति नरनाह नहि शूरत्व देखावजे ।
युद्धन करथि सलाह पुनअरि परिभव पावसे ॥ ३
शत्रु पिशुन ओ व्याधि स्वाभाविक अपकारकर ।
करैनजे निरुपाधि रोग पिशुन अरिहो प्रवल ॥ ४ ॥

क्रम २ शत्रुसों राज्यभूमि सीमा हरण देखि मन्त्री सभ राजा कें कहल हे महाराज अपने कसहिष्णुतासों बहुत राज्यभूमिसीमा अन्य राजा स्वाधीन कयलेल परंच जेकिछु बाचल अछि ताहि रक्षार्थ शक्ति देखावक थीकि । राजा कहल कोनशक्ति देखावब मन्त्रीसभ कहल युद्धसों प्रभुशक्ति राजा कहल प्रथम सन्धिकयलीवक। आगा युद्धकरबेकरब

श्ये कर्म्मण्यलं कालातिपातेन ॥ राजोवाच ॥ युद्धे सति करितुरगपदा तय सन्देहे पातितव्याः ॥ मन्त्रिण ऊचुः ॥ यदि युद्धन्न कर्त्तव्यं तदा सेनायाः किम्प्रयोजनं युद्धप्रयोजिकैव सेना युद्धे पतिष्यति ॥

राजोवाच। युद्धे न केवलं सैन्यं पतति स्वपातशंकापि विद्यते। यदुभयबलसंग्रामे वर्त्तमाने प्रथमश्शरो ममहृदि लगति तदाभवद्भिः स्वामिवत्सलैः किं क्रियते अतएवोक्तं नीतिशास्त्रे। अपि देशं समुत्सृज्य समयं लङ्घते बुधः। समयोलङ्घितोयेन तेन किन्नैव लङ्घितम् ५ ॥ मन्त्रिण ऊचुः। अशक्तौच विपत्तौच पर्थ्यसमयलङ्घनम्। सामर्थ्ये सतिकृत्येषु चपान्न क्षमतेबुधः ६ ॥ इदानीं भवान् समर्थः शत्रून् यदि न पराभविष्यति

भाषानुवाद।

मंत्री कहल जौं तखन युद्ध कयले जायत तौं एखनहि कियक नहि कयलजायत अवश्य कर्म्मकर्त्तव्य में की कालात्यय राजाकहल युद्धमें हस्ती अश्व सेनाकें सन्देह में पतन करब मन्त्री लोक कहल युद्ध अभिमत नहितौं सेनाकको प्रयोजन युद्ध प्रयोजन सेना युद्धमें पतिताहोइछ ॥

राजा कहलयुद्धमें केवलसेनापतन मात्रशंकानहि किन्तु अपनोपतन शंका थीकि जौं उभयबलसंग्राममें शरप्रथमहि हमरहि हृदयलागय तौ अहां सबहिस्वामि वत्सल की करब ॥ नीति वचन जेहन ॥

दोहा ॥

निजय देशक त्यागकय कालक लाघवि जेह।
लाघल जेजन काल के की नहि लाघल सेह ॥ ५ ॥

मन्त्री कहल ॥

चौपाई ॥

काटब समय पडत हो तखन। की अशक्ति आपद पड जखन ॥
विद्यमान जौं तन सामर्थ्य। क्षमा ततय बुधजन कहव्यर्थ ॥ ६ ॥

सम्प्रति अपनें समर्थ शत्रुकां नहि जीतव तौंसमय पावि शत्रु अपनेंकां अत्यन्त परा भूत करत। राजाकहल ॥ तौं युद्धपरिपन्थी हमर प्रतिनिधि ककरहु कयलिअ। मन्त्री

तदा लब्धप्रसरा स्तएव भवन्तं परा भविष्यन्ति । राजोवाच ॥ तर्हि युद्ध परिपन्थो मम प्रतिनिधिः कश्चित्कथ्यतां । मन्त्रिण ऊचुः । राजन् हीन बलं हन्तुं कञ्चित्प्रतिनिधिं कुरु । समानबलसंग्रामे स्वयमेवोद्युरोभव । यतः सौभाग्यं परसौन्दर्य्याद्राज्यं परपराक्रमात् ॥ परबुद्ध्या च विज्ञानं न कोश्चिदनुमन्यते ७॥ राजोवाच ॥ मंत्रिणः किमपिब्रूत युद्धायनोत्सहते म दीयमनः । यदिमांघातयितु मिच्छन्ति भवन्तस्तदा प्रेरयन्तु युद्धे ॥ तस्य राज्ञस्तद्वचनमाकार्य्य मंत्रिणः सर्व्वेतस्मादुत्थायबहिर्ब्बभूवुः । परस्पर मुदीरयामासुश्च । यदयं कुमारः पितरि जीवति विचक्षणः कृतिश्रम श्चो पलचितः ॥ पितर्य्युपरते भीरुर्द्दृश्यते कथमस्य राज्यं स्थास्यति ॥

यतः ॥ यावद्दासोत्परायत्त स्तावद्दृष्टोयमुद्भटः । प्रायः स्वातन्त्र्य मासाद्य स्वभावं भजते नरः ८॥ यावद्दासीत्पितुःक्रोडे तावद्दृष्टः कृतिश्रमः । भारेण

भाषानुवाद ।

कहल ॥ हेमहाराज हीनबल यवुका नाश हेतु प्रतिनिधि प्रयास कयल जायत । किन्तु समबल संग्राममें अपनहि युद्धोत्साही भेलजाय ॥

चौपाई ॥

आनक सुन्दरता का पाव सुन्दर कै जन अबुध कहाव ॥

परक पराक्रम राज्य किमान पर मति सौं की हो विज्ञान ॥ ७ ॥

राजा कहल जौं हमरा मारक इच्छा रहतौं युद्धकरक प्रेरणाकरयित जाउ किछु कहु युद्ध में हमर मन उत्साह युक्तनहि ।

तेहि राजाक कथासुनि मन्त्री सभ ताहिठामसँ उठि वाहर होइत भेलाह परसर ई कथा कयल जे ई कुमार बापक जीवयित पण्डित कर्म्ममे कुशल बुझाला जायित छ ला पिताक परोक्ष संग्राम भीरु भेल देखैछी कोनगत राज्य स्थिर रहत ॥

दोहा ॥

पराधीन यावत रहा तावतबुझिपडपूर ।

कोस्वतंत्रता पाविकें निजस्वभाव भयपूर ॥ ८ ॥

पतिते मूर्ध्नि स्फुटी भूताऽस्य भीरुता ९ । भीरुताचमहद्दूषणं पुरुषस्य । यतः ॥ गिरिकन्दरलीनोऽपि सेनाकोटिवृतोऽपिच ॥ तीर्णसप्तसमुद्रोऽपि भीरुर्भीतिन्न मुञ्चति ॥ १० ॥ तस्य भीरुतया क्रमक्रमेण राज्यमिदं क्षीणमेव भविता । अस्माभिः कर्त्तव्यन्तश्चिन्तनीयम्भवति । यतः ॥ स्वेन दोषेण दुष्टात्मा स्वयं नश्यति केवलम् । भूपालस्य तु दोषेण नश्यन्ति सकला प्रजाः ११ ॥ अस्माभिस्सपरिवारैः साधनैरत्रस्थीयते यद्यस्यमिदानीं परित्यज्यते स्वामी तदा लज्जा पापञ्च यदिन त्यज्यते तदा विनाशः । तत्र किमत्र विधेयं भवतीति महान् सन्देहः सन्देहनिर्णयफलिकैव वुद्धि रस्ति ततः करोत्वयं राजा सन्धानं गच्छतु समयः । यतः॥ भेतव्यं नापदस्तस्याः क्षणो या मन्तराभवेत्। कोजानाति क्षणादूर्द्ध्वं किं विधाता विधास्यति। १२

भाषानुवाद ।

कर्म्मकुशलबुद्धि पड़त खन कुलकथि वापककोर।
राज्य भार माथा पड़ल भेलभीरुता घोर ॥ ९ ॥
भीरुता महादोष पुरुषकें

सोरठा ॥

सेनासंग अपार गिरिकन्दरमें लीनहो।
सातसमुद्रकपार भीरु न त्यागथि भय तदपि ॥ १० ॥

तनिकभीरुतासें क्रम २ ईराज्य क्षीण होयतगयतें हमरा सवहि कौकरव से चिन्तनीय थीक।

दोहा ॥

अपनैं दोषैं दुष्टजन अपनेकार सभनष्ट।
नृपति दोषसें सवप्रजा पावथि कष्टसें कष्ट ॥ ११ ॥

हमरा सवहि परिजन धन सहित एतहिछी जों एखन त्यागि दैव राजाकां तों लज्जा थो पाप नहि त्यागव तों विनाश। तैं एतय की कर्तव्य महासन्देह करथु राजासन्धि गतहोय समय।

दोहा ॥

से आपदकनत्रास किछु क्षण अन्तर पड़जाहि।
केवुझ क्षणउपर चरित कौविधि करता ताहि ॥ १२ ॥

इतिपरामृष्य मन्त्रिणा सार्द्धं स्वं स्वंगृहं जग्मुः सतुपारिभद्रो नामराजा स्वकीयभीरुतया क्रमक्रमेण शत्रुभिराक्रम्य गृह्यमाणः शत्रुसैन्यस्य भेरीरवं श्रुत्वा मन्त्रिणः पप्रच्छ । अहो भिद्यतामस्मते भेरीशब्दो भेदकोनभवति । मन्त्रिण ऊचुः ॥ कुमार भेरीशब्दोनभेदको भवतो भीरुता भेदिका ॥ पश्चा द्वैरीणां भेरीरवं श्रुत्वा दूरादेव पलायितः । यतः । महत्त्वं गूढमेवास्तु दूरे तिष्ठतु पौरुषम् ॥ यत्पितुस्वार्जितं राज्यं भीरुणा तच्चहारितम् ॥ १३ ॥ अपि च । भीरुत्वा भ्रश्यते जनोन कमला भीरोः करे वर्द्धते भीरुं घ्नन्ति पराभवन्ति पिशुना भीरुं हसन्ति स्त्रियः ॥ तर्काभासशताकुलस्य परितश्शङ्काम्बुधौ मज्जतो भीरोः पुंस्त्वमपह्नुतञ्च विधिना स्त्रीत्वञ्च नोन्मीलितम् ॥ १४ ॥ इति भीरुकथा ॥

भाषानुवाद ॥

इत्यादि विचारि मन्त्री सभ अपन अपन घर जायित भेलाह ॥

सेपुनि पारि भद्र नामक राजा क्रमहि क्रम शत्रुगणसौं पराभूत गृहीत शत्रु सैन्यक भेरी शब्द सुनि पुन मन्त्री सभकां पुछयित भेला यः वैद्यक मतकौं भेरी शब्द भेदक नहि होइछ मन्त्री कहल हे कुमार भेरी शब्द नहि भेदक किन्तु अपनेक भीरुता भेदिका थीकि ॥

पश्चात शत्रुगणक भेरी शब्द सुनि दूर पड़यलाह ।

दोहा ॥

रहयु सुगुप्त महत्व पुन पौरुष दूर रहजाय ।
अर्जित तातक राज्यकें कातर दैल बोहाय ॥ १३ ॥

षटपद ॥

सम्पति कलङ्कहि बढ़थि शुनल अछि कातर करमें ।
शरणागत कैजाय दीनजन कातर घरमें ॥
सभजनकां प्रत्यक्ष पिशुन कातर धनहारी ।
देखि देखि हंसक चरित्र हंसैनित नगरक नारी ॥
शंका जलनिधि मे बुड़ल सय कुतर्क गुरुविनु पड़ल ।
भीरुक पुंस्त्वक हरणाकय स्त्रीत्वन विधि तदपिमें गढ़ल ॥१४॥

इतिभीरुकथा ॥

पतिते मूर्ध्नि स्फुटी भूतास्य भीरुता ९ । भीरुताचमहद्दूषणं पुरुषस्य । यतः ॥ गिरिकन्दरलीनोऽपि सेनाकोटिवृतोऽपिच ॥ तीर्णसप्तसमुद्रोऽपि भीरुर्भीतिन्न मुञ्चति ॥ १० ॥ तस्य भीरुतया क्रमक्रमेण राज्यमिदं क्षीणमेव भविता । अस्माभिः कर्त्तव्यन्तच्चिन्तनीयम्भवति । यतः ॥ स्वेन दोषेण दुष्टात्मा स्वयं नश्यति केवलम् । भूपालस्य तु दोषेण नश्यन्ति सकला प्रजाः ११ ॥ अस्माभिस्सपरिवारैः सधनैरत्रस्थीयते यद्यरयमिदानीं परित्यज्यते स्वामी तदा लज्जा पापञ्च यदि न त्यज्यते तदा विनाशः । तच किमत्र विधेयं भवतीति महान् सन्देहः सन्देहनिर्णयफलिकैव बुद्धि रस्ति ततः करोत्वयं राजा सन्धानं गच्छतु समयः । यतः ॥ भेतव्यं नापदस्तस्याः क्षणो या मन्तराभवेत् । कोजानाति क्षणादूर्द्धं किं विधाता विधास्यति । १२

भाषानुवाद ।

कर्म्मकुशलबुद्धि पड़त खन जलछथि वापककोर ।
राज्य भार माथा पड़ल भेलभीरुता घोर ॥ ९ ॥
भीरुता महादोष पुरुषकें

सोरठा ॥

सेनासंग अपार गिरिकन्दरमें लीनहो ।
सातसमुद्रकपार भीरु न त्यागथि भय तदपि ॥ १० ॥

तनिकभीरुतासौं क्रम २ ईराज्य क्षीण होयतगयतै हमरा सबहि कीकरब से चिन्तनी य थीक ।

दोहा ॥

अपनें दोषें दुष्टजन अपनेकर सभनष्ट ।
नृपति दोषसौं सबप्रजा पावथि काटसौं कष्ट ॥ ११ ॥

हमरा सबहि परिजन धनसहित एतहिछी जों एखन त्यागि दैव राजाकां तों लज्जा ओ पाप नहि त्यागव तों विनाश । तैं एतय की कर्त्तव्य महासन्देह करथु राजासन्धि गतहोय समय ।

दोहा ॥

से आपदकनत्रास किछु क्षण अन्तर पड़जाहि ।
कोबुझ क्षणउपर चरित कीविधि करता ताहि ॥ १२ ॥

इतिपरामृष्य मन्त्रिणं सर्व्वें स्वं स्वं गृहं जग्मुः सतुपारिभद्रो नामराजा स्वकीयभीरुतया क्रमक्रमेण शत्रुभिराक्रम्य गृह्यमाणः शत्रुसैन्यस्य भेरीरवं श्रुत्वा मन्त्रिणः पप्रच्छ । अहो भिषजाम्मते भेरीशब्दो भेदकोनभवति । मन्त्रिण ऊचुः ॥ कुमार भेरीशब्दोनभेदको भवतो भीरुता भेदिका ॥ पश्चा दरीणां भेरीरवं श्रुत्वा दूरादेव पलायितः । यतः । महत्वं गूढमेवास्तु दूरे तिष्ठतु पौरुषम् ॥ यत्पितुरर्ज्जितं राज्यं भीरुणा तदुहारितम् ॥ १३ ॥ अपिच । भीरुत्वा श्रयते जनोन कमला भीरोः करे वर्द्धते भीरुं हन्त पराभवन्ति पिशुना भीरुं हसन्ति स्त्रियः ॥ तर्क्काभासशताकुलस्य परितश्शङ्काम्बुधौ मज्जतो भीरोः पुंस्त्वमपह्नुतञ्च विधिना स्त्रीत्वञ्च नोन्मीलितम् ॥ १४ ॥ इति भीरुकथा ॥

भाषानुवाद ॥

इत्य रहि विचारि मन्त्री सभअपनअपन घर जायित भेलाह ॥

सेपुनि पारि भद्र नामक राजा क्रमहि क्रम शत्रुगणसौं पराभूत गृहीत शत्रु सैन्यक भेरी शब्द सुनि पुन मन्त्री सभको पुछयित भेला श्रः वैद्यक मतसौं भेरी शब्द भेदक नहि होइछ मन्त्री कहल हे कुमार भेरी शब्द नहि भेदक किन्तु अपनैक भीरुता भेदिका थोकि ॥

पश्चात शत्रुगणक भेरी शब्द सुनिदूर पड़यलाह ।

दोहा ॥

रहयु सगुप्त महत्व पुन पौरुष दुर रहजाय ।
सञ्चित तापक राज्यको कातर दिल बोहाय ॥ १३ ॥

षटपद ॥

सम्पति कातइकि वढलि शुनल अछि कातर करमे ।
शरणागत कैजाय दीनजन कातर घरमें ॥
सभजनको प्रत्यक्ष पिशुन कातर धनहारी ।
देखि देखि हुनक चरित्र हसैनित नगरक नारी ॥
शंका जलनिधि मे बुडल शय कुतर्क गुरुविनु पढल ।
भीरुक पुंस्त्वक हरणकय स्त्रीत्वन विधि तहिमे गढल ॥१४॥

इतिभीरुकथा ॥

अथकृपणकथा । न ददाति नवाश्नाति धनं रक्षति जीववत्। प्रातरस्म रणीयत्वात्कृपणः कस्य नाप्रियः॥ १ ॥ आसीन्मथुरायां गूढधननामा वैश्यः स च कलावाणिज्यादिभि र्व्वर्त्तुलीकृतः परमकृपणो बभूव । एकदा दु र्भिक्षे प्रत्यासन्ने चिन्तितवान् यदाऽस्मिन् दुर्भिक्षे मम वित्तानि कलत्रा दिभिः खादितव्यानि मया धनशोकेन मर्त्तव्यं तन्नभद्रं। यतः। एकाकी पुरुषः श्रीमान् धनं तस्य परं सुहृत्। अन्येषां सुहृदस्सर्व्वे धनमूलं कुटु म्बकम् ॥२। तदानागतं चिन्ताङ्करोमि। परोक्षस्थाने वित्तानि धारयामी ति परामृश्य तथा कृतवान्। ततो दुर्भिक्षे पतिते परिवारान् सर्व्वान् अन्नेन विना म्रियमाणान् पश्यन्नपि कस्मैचित्किमपि नददौ किन्तु परिवा रैः कण्ठगतप्राणै र्याच्यमानः पद्यमिदमपपाठ। कृपणस्य धनं प्राणा स्तच्च प्रार्थ्यते कथम्। प्राणाः किन्नैव गृह्यन्ते धनशोकविवर्ज्जिताः ३॥ अतस्त

भाषानुवाद ।

अथकृपणकथा ॥

दोहा ॥

देथि न खाथि न कृपणधन जीवक सन प्रति पाल ॥
सभकाँ अप्रिय नाम थो केकहु प्रातः काल ॥ १ ॥

छलाह मथुरामे गूढधन नामकवैश्य सेकला वाणिज्य आदिसों धन अर्ज्जन कयलपर म कृपण भेलाह एकसमय दुर्भिक्ष पड़ल ताहिमे चिन्ताकयल जों एहि दुर्भिक्षमे हमर धनपुत्र स्त्री आदि खाय जायत तों हमधन शोकहि मरब सेनहि नीक ॥

सोरठा ॥

एकाकी धनवान नर तनिकर धन स्वजन थिक।
अनु सकल जे आन धनहिक मूल कुटुम्ब सभ ॥ २ ॥

तैं पहिलहिचैतन्यकरी धरोधन ततय जतय आन नहि देखथि ईविचारि तेहने कयल तैं महादुर्भिक्षमे परिवारसभ अन्नविना मृत समान देखितहु ककरहु किछुनहि देल किन्तुकण्ठगतप्राण परिवारसभ मंगैत गूढधन एकपद्यपढ़ल ॥

सोरठा ॥

कृपणक प्राण समान धनमंगयित कथि आनस्वन।
कियकन माँगथिप्राण धनकशोकसों रहितजे ॥ ३ ॥

स्य पुत्रकलत्रादयो विनान्नेनैव मृताः स्वयञ्च प्राणमात्रावशेषः परामृष्टवान् ॥ यन्नपुत्रकलत्रेभ्यो दत्तं वित्तं मयार्ज्जितम् । तन्निज प्राण रक्षार्थं कथं भोक्ष्ये निराकुलः । ४॥ ततः स्वप्राणरक्षाया मपिनवित्तं विनियुक्ते ॥

उपवासेन दिनानि गमयन्तं तमति दुर्ब्बल न्दृष्ट्वा तन्नगरवासिनः कारुणिकाः पुरुषाः केपि प्रोचुः । हे कृपण किं करिष्यसि तेन धनेन यस्मिन्विद्यमानेऽपि निजप्राणान् नश्यतोऽनुमन्यसे अथवा उचित मेवैत् यतः । अर्ज्जने लभते खेदं क्षतौ शोकञ्च विन्दति । नाप्नोति कृपणो वित्तैर्दानोपभोगजं सुखम् । ५ । अपिच । दीयते न यदुत्साहाद्भुज्यते यन्न कामतः । तद्धनं भुवि दुःखार्थं खेदार्थञ्च विचिन्त्यतः । ६ । गूढधन उवाच । अये नगरवासिनः पुरुषाः किमपिब्रूत । मया प्राणव्ययेनापि धनव्ययोन स्वीक्रियते । तऊचुः । तर्हिराज्ञा चौरेण वा ग्रहीतव्यं त्वयि विपन्ने तवधनम् । गूढधनउवाच । तदन्यस्यैव बुद्धिहीनस्य धनमप्यन्ये

भाषानुवाद ।

ई हेतु तनिकस्त्री बालक अन्नविना मुइल अपनेहि मात्र अवशेष विचार कयल ।

शोरठा ।

हमर उपार्ज्जित वित्त भोगन पुत्र कलत्रकें ।
प्राणत्राणनिमित्त भोगकरवनहि मरणभय ॥ ४ ॥

ततय अपनो प्राणरक्षार्थनहिं धनखर्च करथि ॥

उपवाससौं दिनव्यतीत करयित तनिकां अतिदुर्ब्बल देखि नगर वासीसकरुण हृदय लोक कहल हे कृपण कीकरवह सेधनसौं जेविद्यमान धन प्राण जाइतछौ आगां कोन उपयोग हयतौ ॥ अथवाउचित ॥

दोहा ।

धन अर्ज्जनमें खेदवड धनक्षतिमें अतिशोक ।
दान भोगसुखरहितसौं कठिनकृपण महिलोक ॥ ५ ॥
देथि न मन उत्साहसौं भरि इच्छा नहिखाथि ॥
दुःख खेद कर वित्तसैं जानक भोगमें आथि ॥ ६ ॥

गृह्णन्ति मयास्वकीयधनं गले बद्धा मर्त्तव्य मित्यभिधाय धनपोट्टलकं गृहीत्वा गङ्गातीरं मर्त्तुं जगाम तत्र नाविकं धीवर मप्याह भ्रातर्न्नाविक अमी दुस्त्यजाः ममप्राणाः त्यक्तु कामेनापि मया त्यक्तु न्न शक्यन्ते तत स्त्वं परिवारशोकाकुलं मां गङ्गायां मज्जयित्वा मारय । तदुपाधिना तुभ्यं सुवर्णखण्ड मेकं दास्यामि । नाविकउवाच ॥ तर्हि मे देहि सुवर्ण खण्डमेकम् । ततस्सुवर्णानि प्रकाश्य दित्सया ददर्श दृष्ट्वा पुनरब्रवीत् भ्रातर्न्नाविक सर्व्वाणि सुवर्णानि दाहविशुद्धानि परस्मै दातु मयोग्यानि ततः पुण्यार्थ मेव मारय नाविक स्तानि सुवर्णानि दृष्ट्वा प्रवृद्धलोभस्त मुवाच ॥

मा दास्यसि मे सुवर्णखण्डं पुण्यार्थ मेवाहं त्वां हनिष्यामो त्यवादी त् ततस्तं जलेमज्जयित्वा गतप्राणं कृत्वा सुवर्णानि गृहीत्वा सनाविकः

भाषानुवाद ।

गूढ धनकहल अयो नगर वासीलोक किछुकाछ हमरा प्राणजाय से वहुनीक धन खर्च नहिप्रिय से सूनि नगरवासी लोक कहल तौं राजा की चोरकां ओ धनप्राप्ति तोहर मर णोत्तर गूढधनकहल सेएहन वुद्धि हीनक धनकेओ आन लयलेथिनि हमतों अपन धन गरमें बांधिमरव ईकहि शुनि धनक पोटरी लय गंगातीर मरय जायित भेलाह ततय घटवार मलाहसों मलाहसों कहल हेभ्राता मलाह हमर ई प्राण नहि जाइछ तकर उद्योगमै लागलछी शक्य नहि होइछ ततय परिवार शोकाकुल हमरा गंगामै डुवाय कैं मारह तकर अममैं तोहरा सुवर्ण खण्डएकगोट देव ॥ नाविक कहल ॥ तौं देह हम रा सुवर्ण खण्डएकगोट ॥ ततयगूढ धन देवाक इछासौं सोनाक पोटरी देखि वाहर कयल देखि पुन कहल हेभ्राता नाविक ईसुवर्ण सभ दाह विशुद्ध अछिअनका नहि दय शकैछी ततय धर्म्मार्थैं मारह नाववाला से सुवर्ण देखि प्रवृद्ध लोभ कहल ॥

नहि देव हमरा सुवर्ण खण्ड धर्म्मार्थैं अहां कां हम मारव ई कहयित ततय तनिकां जलमें डुवाय निः प्राण कय धन सुवर्ण सभलय नाविक कृतार्थ होयित भेला ॥

कृतार्थो बभूव । श्लोकस्तु ॥ जनयति हृदि खेदं मंगलञ्च प्रसूते परिह रति यशांसि मानिमाविष्करोति । उपकृतिरहितानां सर्व्वभोगच्युता नां कृपणकरगतानां सम्पदां दुर्व्विपाकः इति कृपणकथा ॥

अथ अलसकथा ।

तद्यथा । उद्योगहेतु रुत्साहः प्राणिधर्म्मो निगद्यते । क्रियास्सर्व्वरूपास्तु विना तेनाऽलसो भवेत् १ । आसीन्मिथिलायां वीरेश्वरो नाम मंत्री स च स्वभावाद्दानशीलः कारुणिकश्च सर्व्वेभ्यो दुर्गतेभ्यो ऽनाथेभ्यश्च प्रत्यह

भषानुवाद ।

रोलाछन्द ।

हृदयमैं दायक खेद भूमङ्ग मंगल दायक नहि ।
यश समूह कों हरथि मलिनता होइछ नहि कहि ॥
सकल भोग सों रहित लोक उप कारन पावै ॥
दुर्व्विपाक की कहुक कृपण कर सम्पति आवै ॥ ७ ॥

इति कृपण कथा समाप्त ॥

अलस कथा ॥

शोरठा ।

प्राणि धर्म्म उत्साह हेतुतत्तय उद्योगथिक ।
सकल क्रिया निर्व्वाह होथि ताहि विनु जनअलस ॥ १ ॥

* रहथि मिथिलामें वीरेश्वर नामक मन्त्रीसे स्वभावहिंदाता ओ दयाशीलसे सभदुर्गत ओ अनाथ लोकका इच्छा भोजन दैआवथि ताहिमें आलसी लोकहुकां अन्नदैआवथि ॥

* यह वीरेश्वर पुरुष परीक्षा ग्रन्थकर्त्ता विद्यापति कविके परदादा के बड़ा भाई था । महामत्तक चण्डेश्वर के पिता । जो चण्डेश्वर का विवाद रत्नाकर आदि ७ ग्रन्थ जो कृत्यचिन्तामणि आदि ग्रन्थ धर्म्मशास्त्र के प्रचरित है । शाके १२३६ मे विवादरत्नाकरग्रन्थ समाप्ति मे लिखा है ।

* रसगुणभुजचन्द्रे सम्मितेशाक वर्षेसहसिधवलपक्षे वागूतीसिन्धुतीरे अदित तुलित मुच्चै रत्नानां स्वर्णराशिं निधि रखिलगुणानां मुत्तरस्सोमनाथः ॥ १ ॥

* मौजे सिमराम प्रगना ठिंगो राज नेहरा राधोपुर के समीप चण्डेश्वर का एक तड़ाग दर्शनीय है जिसके जध मे सर्व्वस्व दानकर सन्यास ग्रहणकर हेमालय पहाड़को चले गये कतिवार वह तुलापुरुषआदि महादान कियाथा । यक्रसिंहदेव कार्णाटका मन्त्रीथा ॥

भिक्षाभोजनं दापयति तन्मध्ये ऽलसेभ्योप्यन्नं दापयति ॥ निर्गतौनाथ्वस र्व्वेशामलसः प्रथमोमतः । किञ्चिन्न क्षमते कर्त्तुं जाठरेणापि वह्निना २ ॥ अथवा परमसुखस्थान मालस्यम् । यतः । कुत्रापि तिष्ठति मनः क्वचिदं गकानि नात्मा चिकीर्षितरसैः श्रममभ्युपैति । आलस्यभाववशगस्य नरस्यमन्ये निद्रा सुखं हरति जाठर एव वह्निः ॥ ३ । ततोऽलसपुरुषाणा मन्वेष्टलाभं श्रुत्वा बहवस्तुन्दपरिमृजास्तत्र वर्त्तुलीबभूवुः । यतः ॥ स्थितिः सौकर्य्यमूलाहि सर्व्वेशामपिसंहतेः ॥ सजातीनां सुखन्दृष्ट्वा केन धावन्ति जन्तवः ॥ ४ ॥

पश्चा दलसानां सुखं दृष्ट्वा धूर्त्ता अपि कृत्रिम मालस्यन्दर्शयित्वा भोज्यं गृह्णन्ति तदनन्तर मलसशालायां बहुद्रव्यव्ययं दृष्ट्वा तन्नियोगि

भाषानुवाद ।

सोरठा ।

निर्गतिसभ सरदार अलसपुरुषजानवप्रथम ॥
करथि नकिछु व्यापार जठरानलसाँ पीड़ितहु ॥ २
अथवा परम सुखस्थानआलस्य ॥

सोरठा ।

नहि निज काजकभार अंगकतहु घो मनकतहु ॥
हरथि शयन सुखसार आलसवश नरकांक्षुधा ॥ ३ ॥

ततय आलसी लोककसुख निर्व्वाह सुनि बहुत ईषतआलस्य लोक एकट्टा होइत भेलाह ॥

दोहा ।

सबहिक स्थिति सुखकाँ रहब असौकर्य्य नहि पाव ॥
सकल जन्तु मैं रीति अछि ततय सजाती आव ॥ ४ ॥

पश्चात् आलसी लोकक सुखदेखि निरालसधूर्त्त कृत्रिमआलस्य देखाय भोज्यसुखमें मिलहाय गेलाह तदनन्तर आलसिक भोज्य शाला मैं बहुतद्रव्यव्यय देखि तकर

पुरुषैः परामृष्टं यदस्मद्बुद्ध्या करुणया केवलमलसेभ्यः स्वामी वस्तूनि दापयति कपटेन निरालसा अपि गृह्णन्ति इति अस्माकं प्रमादः। यदस्मद्दोषेण स्वामिधनं वृथा नष्टं भवतीति वयं प्रत्यवायिनः यदि भवति तदालसपुरुषाणां परीक्षां कुर्म्म इति परामृश्य प्रसुप्तेषु निद्राणेष्वलसशालायां ते नियोगिपुरुषा वह्निं दापयित्वा निरूपयामासुः ततो गृहलग्नं प्रवृद्धमग्निं दृष्ट्वा धूर्त्तास्सर्व्वे पलायिताः॥ पश्चादीषदलसा अपि पलायिताः। चत्वारः पुरुषास्तत्रैव सुप्ताः परस्परमालापयन्ति। एकेन वस्त्रावृतमुखेनोक्तं अहो कथमयं कोलाहलः। द्वितीयेनोक्तं तर्क्यते अस्मिन्गृहे अग्निर्लग्नोऽस्ति तृतीयेनोक्तं यदिदानीं जलार्द्रैर्व्वासोभिः कटैर्व्वाऽस्मान्नावृणोति चतुर्थेनोक्तं अये वाचालाः कति वचनानि वक्ष्यथ तूष्णीं न तिष्ठथ ततश्चतुर्णामपि तेषां परस्परालापं कृत्वा वह्निञ्च प्रवृद्धमेषामुपरि पतिष्यन्तं दृष्ट्वा नियोगिपुरुषैर्वधभयेन चत्वारोऽप्यलसाः केशेष्वाकृष्य गृहीत्वा बहिष्कृताः। पश्चात्तानालोक्य नियोगिभिः

भाषानुवाद।

निगहवान पुरुष मनमें विचारल जे अह्मजानि करुणासों केवल आलसी को स्वामी वस्तु दिअवयित छथि कपटसों निरालसीलोक भी अयखायितछथि ईहमरासवहिक प्रमाद हमरा सवहिक दोषैंत स्वामिधन वृथा नष्ट होइछ एहिमें हमरासवहि पापभागी जों होतौं आलसीक परीक्षा करी ईमन निश्चयकयनिन्द्रित प्रसुप्त आलसीलोक सन्ता अलस शालामें नियोगि पुरुष आगिलगवायनिश्चय करयित भेलाह ततय गृहमें अग्नि प्रज्वलितदेखि धूर्त्त सभपडयलाह पश्चात् अपूर्ण अलस लोक सेहो पडयलाह चारिजन आलसी पुरुष ततहि अशंक सूतल परस्पर कथा करयलगलाह एकवस्त्राच्छादित मुख कहल॥ आः कियैक ई कोलाहल। द्वितीय कहल तर्ककरैछी एहि घरमें आगि लागलअछि तृतीय वजलाह जों कीओ सम्प्रति आर्द्रवस्त्रसों अथवाखिन्नहड़िसों सवहिकां झांपिदितथि॥ चतुर्थकहल ओ वाचाल अहां सवहिकतेकावचन वाजियकीछी चूपने रहि होइअछि ततयचारू आलसी परस्पर अपना मध्य निश्शंक कथा कयल अग्नि जखन प्रज्वलित प्रवृद्ध छनि आलसीलोकक ऊपर खसय लागल तखन भोज्य शाला रक्षक चारूआलसीक टीक धय घिसिआय २ वधभयशंकासों वाहरकयल॥ पश्चात तनि लोकक सत्यालस्य देखि_ अलस शाला नियोगि पुरुष एक पद्यपढल॥

पठितम् । पति रेवगतिः स्त्रीणां बालानां जननी गतिः । नालसानांगतिःकाचिल्लोके कारुणिकं विना ॥ ५ ॥ पश्चात्तेषु लब्धेषु ततोप्यधिकतरं वस्तु मन्त्रीदापयति ॥

इत्यलसकथा ॥

अन्वयव्यतिरेकाभ्या मुक्तं वीरस्यलक्षणम् अप्युदाहृतयः प्रोक्ताः कथाहारा द्वयोरपि ॥

भाषानुवाद ॥

दोहा ।

पति गति वनिता कासदा शिशुगति केवल माय ।
नहि आलसि कां आनगति करुणाशील सहाय ॥ ५ ॥

पश्चात तेहिचारुजन आलसीके अधिक वस्तु देआवथि मन्त्री ॥ इति आलसीकथा ॥

इति समस्तप्रक्रियाविराजमानराजरूपनारायणभवभक्तिपरायणरामेश्वरीवरलब्धप्रसाद महाराजाधिराजश्रीमच्छिवसिंहदेवपादाना माज्ञया श्रीविद्यापतिविरचितायांवीरपरिचायकोनाम प्रथमः परिच्छेदः ॥

सोरठा ॥

अन्वय औ व्यतिरेक कहल वीरलक्षण एतय ।
जे मति जेहन विवेक दुहुकउदाहरणककथा ॥

इति प्रथमःपरिच्छेदः

* पम्मार क्षत्रिय नान्यराजा के बालक मिथिला नान्यपुर श्रो सिमरौनगढी निवासी राजा जयचन्द्र राठोर सैं प्रतिनिधि राजा मल्लदेवथा वहादुरी चिक्कोर राजाके राज्य मे जयचन्द्र राजा सैं अकेला संग्राम किया शाके १०४० । १८ अंकमै कथा है। जिसका चाहिस प्रगन्ना मैं तिरहुत मे मलनी डीह है श्रो तड़ाग अनेक है॥

* राजा नरसिंह को काफरराजा के मारने का वहादुरी मे महमद गजनवी तिरहुति राजा किया। नान्य राज का पोता था। गयासद्दीन वंगदेश से विजय करते सिमरौन गढी सैं नरसिंहदेवजी को ले गये थे।

* हरसिंहदेवराजा मैथिल ब्राह्मण का पंजीप्रवन्ध किया सन्धि विग्रहिक महा वार्त्तिक निवन्धकारक महामहत्तक वीरेश्वरठाकुर के सहायता से यज्ञतड़ागादि निर्म्माण वहुत कियाथा दशकर्म्म पद्धति अवतक वीरेश्वर कृत प्रचलित हैं श्रो मिथिला मैं पण्डौल कोठी सैं उत्तर वीरसायर ग्राम है वहा एक तड़ाग वीरेश्वर का है जिसका नाम वीर सायर है। वीरसागर एही मूल से ग्राम नाम भी वीर सायर है। अनुमान होता है श्रो शुनते है उसी ग्राम मे वसते थे कोई कहता है मह यौर ग्राम मे वसते थे। चण्डेश्वर महथा कृत्यचिन्तामणि मैं लिखा है॥

आसीन्मैथिलतीरभुक्तिविषये मन्त्रप्रभावाहतप्रत्यर्थिक्षितिनायकान्धतमसश्चक्रद्विजानांप्रिवः॥ शौर्य्योल्लासितमण्डल स्सुमनसामर्घ्यश्च पद्माश्रयो देवादित्य इति त्रिलोक महितो मन्त्रीन्द्रचूड़ामणिः॥ १ स्रष्टा सौराजलक्ष्म्या स्सचिवकुलगुरु स्तेजसाविश्वसाक्षी क्षोणानाथानुकम्पापरवशहृदयोजगमः पारिजातः। दृप्यत्सेनापतीना मपथगतिमतां वुद्धिसिन्धोरगस्त्यो हर्म्यौरध्वान्तभानु र्व्विखिलनिजगुणै स्तोषयामास विश्वम्॥ २

फूत्कारोपहताफणीन्द्रशिरसि क्रोड़ानने दंष्ट्रया
विद्धाकुर्म्मकठोरपृष्ठकषणैः पोडामुपेता चिरम् ॥
कार्णाटाधिपमन्त्रिणि प्रविलसत्कीर्त्तिप्रताने मही
दानीव्यसने नयैकसुहृदि चोणी सुखं वर्त्तते ॥ २ ॥

यही वीरेश्वर कार्णाट क्षत्रिय का मन्त्री। एक ज्योतिर्व्विद्यावाले को निर्जन मै भूमि खोदते देखा पुछा कौन प्रयोजन से भूमि खोदते हो वह जोतिषी कहा स्वर्ण मणि ढूढताहू विद्या बल से ठीक किया है एतनही जगह मै होगा। वीरेश्वर कहा आप अपना जन्म पत्री फल देख विचारकीजिये जो आपको स्वर्णमणि मिलैगा बहुतश्रम ढूढकर जोतिषी चलेगये। वह स्वर्णमणि वीरेश्वरका हाथलगा। मणिप्रभावसे बहुतयश महादान दीर्घिका तड़ाग मिथिलामै किया अल्लावदीन दिल्लीसम्राटको हम्वीरचौहाण के संग्राम रणस्तम्भ किला विजयमें कार्णाटवंशी मिथिलाके दिल्ली सम्राटसेनाधिपकेवीरेश्वरमन्त्रीसाथथा स्वर्णमणि महिमा फौजका खर्चा वीरेश्वरदियाथा। १२९५ इसवी में हम्वीरदेवदेवलोकगये। देवादित्यसम्राटसे मन्त्रिरत्नाकरपदवीपायी पिछे यहहाल सम्राटकेकर्णपथहुआ वीरेश्वरकेपास स्वर्णमणि पथ्थलहै। तलव मणिकोकिया वीरेश्वर कहाकाशीजीमे जायगें तबदेदूंगा काशी आनेपर मणि लेकर मणि कर्णिका गङ्गाजी मैं जोरसे वीचमे डालदिया आपकाशी मरण पाय मुक्तभया अनुमान करना चाहिये मिथिलामै पडरी प्रगन्ना मे करेहवदीके पूरव जंगलमे तिलकेश्वर महादेव के मठमै शिला लेखमैभी वीरेश्वरका वाप दादा परदादा का नाम मन्त्री राजतिलक कोहै तिरहुतमें जो किर्त्ति शिला पुरानी है ग्रन्थकेअन्तमें लिखेगें ॥

राज्य भोग्य ॥	वर्ष ॥	२२६
नान्य देव।	३६	गंगासागर।
गङ्गदेव।	१४	
नरसिंहदेव।	५२	
रामसिंहदेव।	९२	
शक्रसिंह।	१२	अक्षोय दीर्घिका। सुखोदीर्घी।
हरिसिंह।	२०	निजाम्वु दीर्घिका। दिघी निजाम।

अथ पुरुषपरीक्षाद्वितीयपरिच्छेदः ॥

अथ राजा पारावारः पुनराह मुनेर्वीरकथा तावदाकर्णिता सुबुद्धिकथां श्रोतुमिच्छामि मुनिरुवाच । राजन्नाकर्णय । युक्तिज्ञानात्यविज्ञातां मार्गं पश्यत्यवौचितम् । सुबुद्धेस्तु कथां श्रुत्वा मूर्खो भवति पण्डितः । १ ॥ बुद्धिस्तीक्ष्णतरा यस्य प्रतिभामेधयाह ॥ पृथक् बुद्ध्यबुद्धिभ्यां सुबुद्धिरिह कथ्यते ॥ २ ॥ एषाम्मध्ये प्रथमं सप्रतिभकथा तावदारभ्यते ॥ बुद्धिस्फुर्त्तिमती यस्य भवे दूहसमन्विता । उत्पन्ने पुच काय्येंषु सप्रतिभउच्यते ॥ ३ ॥ पुराबभूव पृथ्वु श्रीमराजा सचैकदा सुलोचनया प्रियया

भाषानुवाद ॥

अथ राजा पारावार कहइत भेला हेमुनि वीरकथा हम सुनल सुबुद्धि कथा सुनक इच्छाहोइछ ॥ मुनि कहल राजा सुनल जाय ॥

दोहा ।

विनजानल सभ युक्तिबुभ देख अपरिचितवाट ।
होथि सुबुद्धिक सुनि कथा मूर्खों पण्डितराट ॥ १॥

सोरठा ॥

जनिक बुद्धि वड चोष प्रतिभा मेधा सहितपुन ।
कुमति अबुद्धि नदोष से सुबुद्धि पण्डित कहथि ॥ २ ॥

एहि मध्य प्रथम तावत सप्रतिभकथा आरम्भकरैछी ॥

सोरठा ।

स्फुर्त्ति जतय होढेरि तर्क समन्वित जे सुमति ।
कार्य्योत्पन्नक वेरि से लक्षण सप्रतिभ थिक ॥ ३ ॥

सह मृगया दर्शनकौतुकेन रथ मारुह्य चतुरङ्गबलोपेतः पुरान्निश्चक्राम ततोऽरण्यं प्राप्यसैन्यं दिशि दिशि धावितं मृग मन्वेषणाय सर्व्वराजात्वे करथश्चरन्नरण्यमध्ये मनुष्य बालकं मेकं तत्क्षणजातं दिव्याम्बरखण्डो परिशायितन्ददर्श। दृष्ट्वाचमहिषीम भाषतप्रिये पश्याश्चर्य्यं कुतोऽस्मिन्न रण्ये सिंहव्याघ्रसंकुले मनुष्यबालकप्रचारः ॥ देव्युवाच ॥ देव सम्पूर्ण चन्द्र मिव दृष्टिप्रियं बालक मिमन्दृष्ट्वा मम हृदयं करुणार्द्रं जायते। यदि प्रभो राज्ञा भवति तदेनं बालकं गृहीत्वा पुत्रप्रेम्णापालयामि। राजा सक्रोधमब्रवीत्। आः पापे घृणापरित्यागसाहसिनि कथमेन मज्ञातमातरपितरं चाण्डालशङ्कास्पद मकाण्ड एव क्रोडे करिष्यसि। देव्युवाच। देव पुरुषेन निन्द्यो भवति। तथाच॥ दृशा विनिन्द्या पुरुषो न निन्द्यो रत्नप्रसूः पुत्रगुणेन नारी। नज्ञायते कस्य ललाट पट्टे विरा

भाषानुवाद।

पूर्व्वकालमें छोड़त भेलाह पृथुनामक राजा से एकसमय सुलोचना नाम रानी सहित सिकार दर्शन कुतूहलसौं रथपर चढ़ि चतुरङ्ग सेना समेत अपना पुरसौं प्रस्थान कयल त तय वनजाय सेना दिशदिश दौड़ल मृग अन्वेषणार्थ एकरथ राजा रानी जंगलमें चलयित मनुष्य बालक तत्क्षण उत्पन्न दिव्य वस्त्र खण्डक उपर सूताओल देखयित भेलाह। से देखि राजा रानी काकहल॥ प्राणप्रिया देखू२ आश्चर्य्य कतय एतय महा घोर वनमे सिंह व्याघ्र निवास स्थानमें मनुष्य बालक॥

रानी कहयित भेली। हे महाराज संपूर्ण चन्द्रमा सन लोचनानन्द कारक बालक ई दे खि हमर हृदय अतिशय करुणा युक्त होइछ जौं प्रभुक आज्ञा होतौं एहि बालक को ग्रह ण कयप्रेम वात्सल्य सौं पालन करी। राजा कोप सहित कहल। आः पापशीला घृणा परि त्याग साहसकारिणी कोना ई अज्ञात माता पिताक चण्डाल संशय गृह असमय मैं कोरा लेव रानी कहल महाराज पुरुष कतहु निन्दा हो देखलजाय।

रोलाछन्द।

दृशा विनिन्द्या होथ पुरुष निन्दित नहि जानक
रत्न प्रसूता नारि पुत्र गुण गणसौं मानक
केयुक तनिक ललाट पटको लिखल विधाता
ककरा हो नहि दाय एहन शिशु को नहि माता ॥ ४ ॥

भाले किं लिखितं विधातुः । ४ ॥ यथा पूजितकुला दन्यत्र जातस्य कान्तिरीदृशी सम्भवति तदेन कृपया परित्यक्तुन्न शक्नोमीति ब्रुवाणा निषिध्यमानापि बालकग्रहिणा राज्ञा निर्भर्त्सिता च सा स्वभावा दाज्ञाभङ्गासहा राजानः महिष्यश्च सौभाग्यमदगर्व्विता भवन्ति ततः परस्परकलहे राजा तां प्रति चुकोप रथाच्चावतारयामास सैन्यञ्चादिदेश यः कश्चिदेना मन्दभाग्यां नीचानुरागिणी मनुगच्छति यश्चैषामनुयास्यति तस्याहं रिपोरिव शिरश्छेदं विधास्यामि ॥ तथाहि ॥

आत्मघातं गृहत्याग न्धनहानिं सुहृद्वधम् ।
ध्यानलोपकरः पुंसां कोपः कारयते न किम् । ५ ॥

तदनन्तरं सकलसैन्यसहिते तस्मिन् भूपाले परावृत्य गृहङ्गते साराज्ञी निर्ज्जने तत्रारण्ये परमभीता चिन्तयामास तस्मान्निष्ठुरपुरुषप्रेयसीनामियमेव दशा परिणमति अथवा अलमनया चिन्तया यन्म

भाषानुवाद ।

नहि पूजित कुलमें अन्यत्र उत्पन्नक कान्ति एहनि होइति से सम्भव तैं हम दया सौं एहि बालक कें नहि त्यागि सकैछी ई कथा करयित रानी का राजा निवारण कयल बालक ग्रह राजा रानीक गञ्जनो कयल । स्वभावहि राजा आज्ञा भङ्ग नहि सहि सकथि रानी सेहो सौभाग्यमद गर्व्विता होइछथि । ततय परस्पर राजा रानी कें कलह भेला । राजा रानी प्रति क्रोधकयल । रथपर सौं रानी कें उतारि देल ओ सैन्य सबकें आज्ञा देल जे केओ ई मन्द भाग्या नीचानुरागिणीक संग पाछु जाएत अथवा जनिकें संगई जइतिथ तनिक हम शत्रु समान शिर शछेद करब ॥

दोहा ॥

आत्म घात गृह त्याग धन हानि ध्यान कर लोप ।
सुहृदक वध इत्यादि को कौन कराबय कोप ॥ ५ ॥

तदुत्तर राजा सकल सैन्य सहित अपन नगर प्राप्त भेलाह ततय एकाकिनी रानी महा घोर वनमें अत्यन्त भीता चिन्ता करयित भेली कठोरपुरुषक स्त्रीलोकक एहनिये दशा परिणति अथ व्यर्थ चिन्ता जे हम कयल तदनुसार करब । ततय रानी बालक का शयनीय वस्त्र

या कृत स्तदनुसारेण व्यवहारामीति तं बालकं शयनीयवस्त्ररुमं तं क्रोड़े कृत्वा दरधारगद्यमस्तना स्वकीयपरिधानवस्त्रं मानी कृत्य भूषणान्यङ्गा दवतार्य्य गृहीत्वा काञ्चि दिश मुद्दिश्य चलितवती दैवयोगेन कियत्यपि दूरे ब्रह्मपुर मेकमवाप तत्रैकां करुणावतीं धार्म्मिकस्वभावां ब्राह्मणीन्दृष्ट्वा प्रणम्योवाच । भगवति आर्य्ये दरिद्रवधूरहं सपत्नीखेदिता त्वामाश्रित्य जीवितु मिच्छामि । ब्राह्मण्युवाच ॥ नत्वं दरिद्रवधूः किन्तु राजपत्नी ॥

यतः । कर्णौ त्याजितकुण्डलौ भुजलते रुद्धस्तरत्नाङ्गदे हारत्यागहृतश्रिया विवकुचौ पादौच निर्नूपुरौ । सद्यस्त्यक्तविभूषणानिरुच्छिभिश्चिह्नान्तिराभिः क्रमा दङ्गान्यैव निवेदन्ति सुदति त्वञ्चापि दिव्याङ्गना ॥ तत स्तामाश्रित्यतं बालकं पुपोष यथा विधिविशाख इतिनाम्ना तस्य लम्बकार । विशाखस्तु तया पोष्यमाणः क्रमेण कौमारदशा मासमाद ।

भषानुवाद ॥

समेत कोर कय दग्ध अंगलक भत्त सौं अपन परिधानीय वस्त्र मलान कय । अलङ्करण अङ्गसौं उतारिधय कोनो दिश उद्देश कय चलली । दैवयोगे कतोक दूरमे ब्रह्मपुर एकगो ततय एक दयाशीला धार्मिक स्वभावा ब्राह्मणीकाँ देखि प्रणाम कय कहल हे भगवती आर्य्या । हम दरिद्रक स्त्री थिकहु सपत्नी खेदिता अपनैक आश्रय रहि जीवक इच्छा करयित छी । ब्राह्मणी कहल । नहि थिकहु अहां दरिद्रक गृहिणी किन्तु रानी थिकहु ॥

षटपदछन्द ।

सम्प्रति अयलउतारि कतहु कुण्डल दुहुकानक ।
रत्नाङ्गद परित्याग हार त्यागल अनु मानक ॥
सम्प्रति नूपुर त्याग विभूषण सब परि त्यागल ।
अलङ्करण स्वस्थान चिन्ह शोभा अभजागल ॥
अहाँ महारानी थिकहु अछिक अङ्ग अभटा कहल ।
सुखसौं रङ्गसुन्दरि एतय छल यहाँक किछु नहि लहल ॥६॥

ततय तनिका आश्रय कय बालकक पालनकरयित भेली । यथार्थनाम बालकक विशाख अयल । विशाख पुनि ओहि महारानी सौं पोषित क्रमहिक्रम कुमार दशाकाँ प्राप्त भेलाह एक

ततो महादेवी मपृच्छ। मातः किन्मम पितुर्नाम ॥ देव्युवाच। नाहञ्जा
नामि" विशाखोऽब्रवीत् त्वन्मम माता त्वमेव यदि मम पितुर्नाम नजा
नासि तदा सार्थनामैवाहं विशाखः किं करिष्यामि अज्ञातपितृकः कि
मर्थम्वा जीविष्यामि। यतः पुत्रे जाते पिता नन्दति मयि जाते कोन
न्दिष्यति पुत्रो जातः पितरन्तर्पयति अहं जातः कन्तर्पयामि तद्फल
न्मम जीवितमिति विलपन्महाकष्टेन मुक्तकण्ठोऽरोद तं रुदन्त म्लान
खिन्नं मर्त्तुकामं दृष्ट्वा राजमहिषी पूर्व्ववृत्तान्तं कथयामास। देव्युवाच"
अय मयं वृत्तान्तः। त्वय्येव करुणापराधेन ममेदृशी दुरवस्था। विशा
ख उवाच। मातः कथ महमेव तव दुर्दशायाः कारणन्ततो महती प्र
त्याशा तव विद्यते मयि ॥

तदिमां त्यक्ताहं नपि प्राणान्न त्यजामि तवप्रत्याशापूरणाय जी
विष्यामि वद कस्मिन्प्रदेशे मां प्राप्तवत्यसि। यतः ॥ ज्ञातव्येषु च कार्य्ये
षु देशकालानुसारतः। पूर्व्वापरपरिज्ञाना त्पुंसां तर्कः प्रजायते ॥ ७ ॥

भाषानुवाद।

दिनमहादेवीकाँ पुछयित भेला हेमाता कोहमरा पिताकनाम" रानीकहल" नहि हमजनै तछी" विशाखकहल" अपनै हमरमाता तखनअपनहि जोँ हमरपिताकनाम नहिजानलतौँ यथार्थनाम हमविशाख थिकहुकीकरु। अपरिचितपितृक हमर जीवनव्यर्थ पुत्रभेलासौँ पिताआनन्द होइछथि हमरा उत्पन्नभेलै कोहर्षित हयत पुत्र पितृ तर्प्पण करैछथि हमउत्पन्नककर तर्प्पण करव तेँ हमर जीवन व्यर्थ इत्यादि विलापकय उच्चस्वरैरोदन करय लगलाह हुनि मनस्विक रोदन शुनि औ मरण अभिप्राय देखि महारानी यथावत पूर्ववृत्तान्त कहल अहयिक वृत्तान्त" अहांक विषयकरुणाक अपराधसौँ हमरा ई दुर्दशा प्राप्त" विशाख कहल" माता कोनाहमहि अपनैकँ दुर्दशाकहेतु ततय महाप्रत्याशा अपनैका अछि हमराविषय ॥

तेँ ई त्याग करक योगत्र प्राण नहि त्यागव अपनेंक प्रत्याशा पूरण निमित्त संजीव कहु कोनठाम हमरा पाओल कारण तकर।

सोरठा ॥ देश काल अनुसार सकल कार्य्य ज्ञातव्य मे।
जनकाँ तर्क विचार पूर्व्वापर परि ज्ञानसौँ ॥ ७॥

ततस्तान्देशङ्गत्वा निरूपयामि कुतो मम जन्मेति ततस्तया देव्या नीय
मानन्देशङ्गत्वा तदरण्यं सम्भ्राम । भ्रमंश्च तत्र सरोपकण्ठे सुखासीनन्त
पश्शीलनामानं मुनिन्द्रदर्श तमुपागम्य प्रणम्योवाच । भगवन् प्रसीद प्र
सीद । ऋषिरुवाच ॥ कस्त्वं किमर्थ मत्रागतोऽसि विशाखस्तु तत्सकल
वृत्तान्तं निवेदयामास । ऋषिरुवाच ॥ कुमार यदि तत्समयशयनीय
वस्त्रखण्ड न्तव प्राप्यते तदा तव माता पिता च ज्ञायते । ततो देव्यास्स
काशादानीय कुमारो वस्त्रखण्ड न्दर्शितवान् मुनिरपि तदर्द्धं द्वितीय
वस्त्रखण्डं स्वकीयगृहा दानीयदर्शितवान् उभे अपि निरूप्यमाने एकस्यै
व वस्त्रस्य खण्डे निश्चीय मुनि स्सलज्ज मवोचत शृणु कुमार वृत्तान्तं
मया तपः कर्त्तु मारब्धं तेन तपसा शक्र श्शङ्काकुलितो बभूव यदयमैन्द्र

भाषानुवाद ।

ततय ताहि ठामजाय निश्चयकरब कतयसौं हमर जन्म ई" ततय महारानी सङ्ग लयजाय सो यल देखाय देलथिनि ओहि वनमे बहुत भ्रमण कयल भ्रमणकरैत एक सरोवरसमीप सुखस्थित तपश्शीलनामक ऋषिकां देखयित भेलाह तनिक समीपजाय प्रणाम कय कहल हे भगवान हमरा विषय प्रसन्न होउ प्रसन्नहोउ ऋषिकहल के थहां कोनहेतु एतय आएलछी विशाख सब वृत्तान्त निवेदन कयल मुनि पुनि कहल अओ कुमार जौं ताहि समयक शयनीय वस्त्रखण्ड अहांक पाएब तखन अहांक माय बापक परिचय कहब ततय रानीसौं आनि कुमार शैयनीय वस्त्रखण्ड देखवयित भेलाह मुनि सेहो तकर द्वितीय खण्ड अपन कुटीसौं आनि देखाओल दूनूखण्ड मिलाओल भेल निश्चय जे एकहि वस्त्रक मुनिसलज्ज कहल शुनूकुमार हम तपस्यारम्भ कयल तेहि तपस्यासौं इन्द्र शंकाकुल होइतभेलाह जे ई इन्द्रपद नहि लयलेथि हमर तपोविघ्नहेतु विद्याधरी तिलोत्तमा कों ओ पठाओल तनिक शृङ्गार चेष्टासौं सदर्प कन्दर्प हमर हृदय अपन वश करयित भेल ॥

पदं ग्रहीष्यति मम तपोभङ्गनिमित्तं तिलोत्तमानाम्नीं विद्याधरीं प्रस्थापयामास ॥ तस्याःशृङ्गारचेष्टाभिस्सदर्प्पः कन्दर्प्पो ममहृदयं स्ववशञ्चकार ॥ तथाहि ॥ गणयति न सदुपदेशं कलयति न भयं न्नपान्वति वीडाम् ॥ कज्जलमलिनकटाक्षैः कमलदृशाङ्कवलितश्चेतः ॥ ८ ॥

तत स्त्वयांत्वमम पुत्रोऽभवः । तिलोत्तमाच मम तपोभङ्गेन कृतार्था स्वकीयपरिधानवस्त्रं द्विधाकृत्वा प्रत्यभिज्ञानार्थ मिदं मद्यन्दत्तवती द्वितीयार्द्धं शय्यांकृत्वा त्वां शायथित्वा वस्त्रान्तरं परिधाय स्वर्गञ्जगाम" कुमारस्तु" देवकन्याया मुनेश्च पुत्रोऽह मिति परमसहर्षो बभूव मुनेर्व्वर मासाद्य तेनैव पथा सुलोचनया सह पृथो र्नगर माजगाम तत्र च कस्यापि गृहे सुलोचनां गुप्तवेषा मवस्थाप्य स्वयं सेवकमुद्रया राज्ञ स्सन्दर्शनं कृत्वा पृथोः सेवापरायणो बभूव क्रमेण स सप्रतिभ सर्व्वधाराचतुरः पृथोः प्रतीहारो बभूव प्रतीहारपदव्यां वर्त्तमानः प्रभावेनोपका

भाषानुवाद।

दोहा ॥

हेतु

कज्जल मलिन कटाक्षसौं कमल नयनि वश चित्त।
नहि भय गुरुउपदेशनहि लाज न ततय प्रवृत्त ॥ ८ ॥

ततय तनिकां विषय तौं ह हमर पुत्र भेलाह तिलोत्तमा पुनि हमर तपोभङ्गसौं कृतार्था पंवन परिधानीय वस्त्र दुइ खण्डकय परिचयार्थ ई हमरा देयित भेली द्वितीयार्द्धखण्डशय्या काय ताहि पर तोहरा सुताय अन्य वस्त्र पहिरि स्वर्ग गेली कुमार पुन देवकन्या श्रोम् निक बालक हमई बुझि अत्यन्त हर्षयुक्त होयित भेला मुनिसौं वरपावि तेही वाटैं सुलोचना सहित पृथुराजाक नगर पहुचयित भेलाह ततहु पुन ककरहु गृहमें सुलोचना गुप्तवेषा कां वासदेयाय अपनैं सेवक मुद्रासौं" राजाक दर्शन काय सेवानिरत होइत भेलाह" क्रमहि सौं सेप्रतिभ सर्व्व धाराचतुर पृथु राजाकप्रतीहार होइत भेलाह" प्रतीहार पदारूढमें प्रभावसौं उपकारसौं दानसौं पुन सकल राज्य सुभट चक्र वश आनि सुलोचनाकां कहल हेमाता आइ अपनमनोरथ की अहांक साधन करव ॥

रेण दानेनच सकलमपि राज्यं सुभटचक्रं वश मानीय सुलोचना स्व भावे मातः" कथय निजमनोरथं किन्ते करवाणि ।

"देव्युवाच" । यदि पुत्र शक्नोषि तदा पृथुं राजानं शृङ्खलै स्वय्यं स्यमे देहि । विशाखउवाच ॥ मम लीलासाध्य मिदङ्कर्म्म । ततः प्रभाते चि चतुरै र्निजानुरक्तैः पुरुषैः शृङ्खलहस्तै खड्गहस्तैः पृथोः सर्व्वावसरे सर्व्वानप्रत्याह रे रे सभासदो व स्सर्व्वान्विज्ञापयामि सर्व्वेयूयं मयासह कृतसन्धाना एव युष्माक मेक एव पुरुषो न सन्धितः स च्चात्मानं परि चिनोत्येव यदि हस्तपादौ चालयिष्यति तदनेन खड्गे नाऽविलम्बित मे व हन्तव्यः । साम्प्रतमय महं राजानं बध्नामी ति शृङ्खलहस्तपुरुषद्वारा रा जानं सय्यं स्य सिंहासना दवतारयामास सभासदस्तु स्वस्वातिरिक्तान् स र्व्वान् परस्परं कृतसन्धाना नवलोक्य केप्यस्तानि नव्यापारयामासुः । यस्तु तस्तु सर्व्वे अकृतसन्धानाएव विशाखो राजा बभूव ॥

भाषानुवाद ।

सुलोचना कहल" हेपुत्र" जौं सक्य होतौ पृथु राजाकौ वेड़ी पहिराय हमरा निकट आनिदिखाए दीय । विशाख कहल" हमर लीला साध्य ई कर्म्मअछि" ततय प्रभात काल तीनि चारि अपन अनुरक्त पुरुष वेड़ी धोत रुचारिहाथें पृथुराजाक सकल जन अवरसभा मैं सभलोककौं कहल रेरे सभास्थ लोक तौहरा सवहिकौं एक आज्ञादिअ जाइछी तौहरा सवहि जन हमर अभिमत अनुरक्त छह परंच तौहरा मैं एकजन हमर विचार बाहर छथि सेओ अपना आत्माकौं चिन्हितहि छथि जौं हाथ पयर संचार करताह तौं एही तरुआ रिसौं एहि ठाम मारल जयताह एखन हम ऐह राजाकौं बान्है छी ई कहयित सेओ हस्त पुरुषद्वारा राजा कौं बांधि सयंत्रमित कय सिंहासन परसौं उतारि दयित भेलाह राज सभ्यलोक अपना सौं आन सव विशाखक विचारस्थ जानि केओ अस्त्र प्रयोग नहि कयलनाहस्तव ककरो तेहन विचार नहि विशाख राजा चोहत भेलाह ॥

तदनन्तरं सर्थ्यमानं पृथुं देव्याः सुलोचनायाः पुरो निगडनिबद्धं निनाय तन्दृष्ट्वा परमहृष्टा सुलोचनोवाच । कच्चिन्मां परिचिनोति देवः । राजोवाच ॥ परिचिनोमि त्वां निजपत्नीम् । सुलोचनोवाच ॥ विशाखो ऽसौ परिचीयते देवेन । राजोवाच ॥ विशाखन्नजानामि । देव्युवाच । यमुद्दिश्य मया पुरा पठितं दशाविनिन्द्यो पुरुषो न निन्द्य इति । सएवा यं शिशुरिदानीमेवतां पुरुषतां प्राप्य यद्गनेन देवोपि बद्धोऽस्ति इत्यभिधाय तया भर्त्तुः प्रणिपत्य पुनस्तस्मिन्नेवराज्ये राजाकृतः । विशाखस्तु तस्मिन्नेव राज्ञि दर्शितपितृभक्ति र्युवराजो बभूव । श्लोकास्तु ।

सैन्येनापि विना धनेनच विना सिद्धैर्विना बान्धवै
र्व्युक्त्या केवल मेव येन नृपते र्जित्वा गृहीत म्पदम् ।
राज्ञो पूर्णमनोरथाच विहिता पित्रोः कथाचीतिता
साख्याता जगतीतले प्रतिभया मन्त्री विशाखोऽभवत् । ८ ॥

तस्यैव कृति रघुनाऽपि नीतिसर्व्वस्वं मुद्राराक्षस नाम नाटक म्प्रचरत्येवेति किम्वदन्ती ॥ इति सप्रतिभ कथा ।

भाषानुवाद ॥

तदनन्तर तथाविध सर्यंत्रमित राजा कौं सुलोचनाक समीपलयजाय देखाघोलतैहन राजाकां सुलोचना देखिकहल किछु हमरा चिन्हइतछी महाराज" "राजाकहल" चिन्है छीअपन पत्नी" सुलोचना पुनपुछल" अपनै विशाखकांजनैछी" राजाकहल" विशाख नहि हमरा परिचित" सुलोचना कहल" जनिकाउद्देशकय हम पूर्व्वपढल दशाविनिन्द्या छोथि इत्यादि सैह शिशुथिका जेएहन सुपुरुष पावि जकराओं हे महाराज अपनहु बांधल गेलछी ईकहिरानी राजाक प्रणाम कय ताही राज्यमैं राजा कयल विशाख पुन ताही राजामै पितृभक्ति मानि युवराजहोइतभेलाह ॥

दोहा ।

सैन्य वित्त बान्धव रहित मति जिति नृपतिविशाख ।
बुझलजननिजानखजनक रानि पूर्ण अभिलाख ॥ ८ ॥

तनिकै कृत एखनहु अछि नीतिसर्व्वस्व मुद्राराक्षस नाम नाटक प्रचरित अछि एहनिकिम्वदन्त । इतिसप्रतिभकथा ॥

अथ मेधाविकथा ॥

तद्यथा । सकृदुक्तञ्च गृह्णाति न च विस्मरति श्रुतम् ।
धीर्द्धारणावती यस्य मेधावी स इहोच्यते ॥ १ ॥

बभूव गौडविषये श्रीहर्षनामककविपण्डितः स च नलचरिताभिधानं काव्यं कृत्वा परामृष्टवान् ॥

यतः । रसवन्मानसग्राहि गुणालङ्कारसंयुतम् ।
कवीनां यशसे काव्यं छायायाऽन्यच्च जायते ॥ २ ॥

अपरञ्च । अग्नौ परिच्यते स्वर्णं काव्यं सदसि तद्विदि ।
किं कवेस्तेन काव्येन सद्भिर्यन्नानुमन्यते ॥ ३ ॥

तत स्तत्काव्यन्नीत्वा पण्डितमण्डलीं मुद्दिश्य वाराणसीं जगाम । तत्र च कोकनामानं पण्डितं सुश्रावयामास कोकस्तु संसारसुखविरक्तः प्रतिक्षणं समाधौ तिष्ठति यदा च मध्याह्नसमये मणिकर्णिकां प्रति स्नानार्थी गच्छति तदा गच्छन्नेवाऽऽकर्णयति श्रीहर्षस्तदनु गच्छन् पठति प्रत्यहं

भाषानुवाद ॥

अथ मेधाविकथा लिखैछन ॥

दोहा ।

एक बेरि कहलंहि ग्रहण कर सुनल न बिसरथि जेह ।
बुद्धि धारणावति जनिक मेधावी हो सेह ॥ १ ॥

होइत भेलाह गौड़ देश मैं श्री हर्षनामक कवि पण्डित से पुनि नल चरित नाम काव्य कय विचार कयल ॥

दोहा

रसयुत मनहर गुण सहित अलंकार कर वास ।
कविजन चमकार काव्य से आन जानु थिक हास ॥ २

दोहा पदाकुलक ॥

अग्नि मध्यहो कनक परीक्षा काव्यक कवि बुध देश ।
कीकवि तनिक काव्य सौं जे सुनि पण्डितन कहलन वेश ॥ ३ ॥

ततय से काव्य लय पण्डित मण्डली उद्देश कय काशी जाइत भेलाह ततय कोक नामक पण्डित कां सुनबइत भेलाह। कोक पण्डित पुन संसार सुख विरक्त सतत समाधिस्थ रहथि जखन मध्याह्न मैं मणिकर्णिका स्नानार्थी जाथि तखन बाटहि बाट सुनथि

किमप्युत्तरं न प्राप्नोति एकदा श्रीहर्षेणोक्तं आर्य्य महाकाव्ये कृत श्रमोऽहन्तत्परीक्षार्थं त्वामुद्दिश्य विदग्धबुद्ध्या स्वदेशीयवात्सल्येन महतोदूरादागतोऽस्मि ॥

पथि गच्छतो भवतः पुरस्तात्सदसद्विवेकप्रत्याशया पठामि भवांश्च निन्दति नचाभिनन्दति तन्मन्ये कर्णमेव नार्प्पयति भवान्। कोकउवाच। आः कथमहं कर्णन्नार्प्पयामि किन्तु सम्पूर्णं श्रुत्वा शब्दार्थयोरूहापोहेन सन्दर्भशुद्धिं ज्ञात्वा विशेषं वक्ष्यामि अनया वासनया न किमपि वच्मि। काव्यन्तु मया कर्णीकृतं मनसि धारितञ्चेतियदिभवान्न प्रत्येति तदाशृणोतु ततो मास माकर्णितानि सर्व्वाणि पद्यानि पपाठ। तदाकर्ण्य साश्चर्य्यं सानन्दश्च श्रीहर्षस्तत्पादयोः पपात। श्रीहर्ष उवाच॥ भोः कोक पण्डित परितुष्टोऽस्मि तव मेधामहत्त्वेन।

भाषानुवाद ॥

श्री हर्षकवि तनिक सङ्ग अनुचर पढ़थि सब दिन। परंच किछु सत् की असत् उत्तर नहि पावथि एक समय श्रीहर्ष कहयित भेला हे महा पण्डितराज हम महा काव्यमें कयल परिश्रम तत्परीक्षार्थ अपनेक उद्देश करय सर्व्वविज्ञ बुद्धिसौं बहुत दूर सौं अएलहु ॥

हम। बाट में चलयित अपनेक आगां सत् असत् विचारक प्रत्याशा सौं पढ़ैछी परंच अपने नहि निन्दा कयल वा काव्य प्रशंसा कयल। अनुमान होइछ अपने कानमें नहि भयल ध्यानस्थे रहलहु। कोक पण्डित कहल। आः कियैक नहि हम मन दय शुनब संपूर्ण शुनि शब्द अर्थव्यङ्ग्यादि सन्दर्भ शुद्धि जानि विशेष कहब ई वासनासौं हम नहि किछु बजलहु काव्य तौं हम शुनल मनमें धयलौ अहांको विश्वास नहिसै तौं शुनू। ततय कोक पण्डित मास दिनक शुनल श्लोक पढि देल। से शुनि आश्चर्य्यमानि आनन्द मन श्रीहर्ष कोक पण्डितक पयर पर खसलाह श्रीहर्ष कहल। हे महा पण्डित अपनेक

कोकस्तु तस्य काव्यस्य गुणान् प्रस्तुत्य दोषान् समाधाय विशेषानुल्लप्य तं श्रीहर्षकविराजं हृष्टमनसं कृत्वागृहं प्रस्थापयामास। तथाहि।

वस्तुदोष मनादृत्य गुणांश्चिन्वन्ति तद्विदः।
अपि कण्टकिनः पुष्पे ग्रन्धं जीघ्रति षट पदः॥ ४ ॥

इति मेधाविकथा ॥

भाषानुवाद ॥

मेधाक समत्व सौं हम सन्तुष्ट भेलहु कोक पण्डित पुन काव्यक प्रशंसा कय दोषक समाधानदय अपनो विविध अर्थ चातुरी देखाय हृष्ट मन श्रीहर्षकविराज कों अपन गृह प्रस्थान करवयित भेला ॥

सोरठा ॥

वस्तु दोष नहि मान गुण ग्रहण कर विज्ञ जन।
केतकि वृष्टी समान सुमग सुगन्धिक अलि रसिक ॥ ४

इति मेधावि कथा ॥

अथ सुबुद्धिकथा ।

तद्यथा । मेधाच प्रति भाचैव बुद्धिर्य्यस्य गरीयसी । ससुबुद्धिरिति ख्यातः सन्देहे निर्णयक्षमः ॥ १ ॥ आसीन्मिथिलायां * कार्णाट कुलसम्भवो हरिसिंहदेवो नामराजा तस्य साङ्ख्यसिद्धान्तपारगामी

भाषानुवाद ।

अथ सुबुद्धि कथा ॥

दोहा ॥

मेधा प्रतिभा युक्त मति सो हसबुद्धि कहाव ।
सन्देहक निर्णय कुशल सभा सकल प्रस्ताव ॥ १

होइतभेलाह मिथिलामें कार्णाट कुलसम्भव हरिसिंह देवनामक राजा तनिका सांख्य सिद्धान्त पार गामी दण्डनीति कुशल गणेश्वर नाम मन्त्री तनिक नाना विध सुबुद्धिता

---

* यह हरसिंहदेव नान्यदेव राजा जिसका १८ पृष्टाङ्कमें संक्षेप हाल लिखा है उसी वंशके पचमाराजाथा। शाके १२१६ मे जन्म था उक्तराजा १२४८ मे तिरहुत दरभंगासे पूरव ७ कोस औ मकरीसे १॥ कोस दक्षिन राज नेहरा राघोपुर प्रसिद्धके निवासी थां वहा उसगाम मै वड़ा तड़ाग औ गृह कोट वर्त्तमान है वड़ा तड़ाग के यज्ञ में अनेक देशीय ब्राह्मण सुपण्डित निमंत्रित कर मैथिल ब्राह्मण का पंजी प्रबन्ध नाम विवाह विषयक अस्वजनता आदि दोष निवृत्ति विचार धर्म्मशास्त्रानुसार सें सुखर हरिनाथाचार्य्य मंगरौनी निवासी पण्डितद्वारा किया । दैवाधीन वहुघटनाकोड़ उत्तर पहाड़जंगलको चलिगये मिथिला में मौजे उमागाम प्रगन्ना भाला मै अवतक हरसिंह देवहो ग्राम देव मान पूजित है । अनुमान होता है यवन बाधित भएथे । वहा भौनिवास तड़ागचिन्ह है ॥

शाके श्रीहरसिंहदेवनृपते र्भूपार्क तुल्ये जनि
स्तस्मादन्तमितेऽब्दके द्विजगणैः पंजीप्रवन्धःकृतः ।
तस्माद्वैरिजवंशवैरकलिते सद्विश्वचक्रे पुरा
सद्विप्राय समर्प्पितसुकृतिने शान्ताय तस्मैनमः । १ ॥

दण्डनीतिकुशलो १ गणेश्वरनामधेयोमन्त्री बभूव तस्यच नाना विद्यां समुद्धतां श्रुत्वा देवगिरौ रामदेवो नामराजा परमसाश्चर्य्यश्चिन्तया मास । कथम्मर्त्यलोकवासिनोऽपि बृहस्पतेरिव मनीषा श्रूयते भवतु निरूपयामि तावत् तदनन्तरंस राजा हरिसिंहदेवेन समं मैत्री माचरत् । यतः ॥

सदृशेन समं पुंसः प्रेमोदर्कं सुखं भवेत् ।
स्थिरक्रियेण शूरेण कृतज्ञेन महात्मना ॥ २ ॥

अपिच । नष्टे कोषे हते सैन्ये भृत्येच विकृतिङ्गते ।
कुलीनेन कृता मैत्री पुंसः कल्पलतायते ॥ ३ ॥

भाषानुवाद ।

शुनि देवपर्व्वतक राम देवनामक राजापरम आश्चर्य्यमानिचिन्ता करयित भेला कोन त रह मर्त्य लोक निवासी वृहस्पतिक समान बुद्धिमान गुनैछी होय शुत कथाकनिश्चय करैछो तावत् तदनन्तर हरसिंह देवक सङ्गमैत्री करयित भेला ॥

दोहा ॥

नष्ट कोषहत सैन्यजन भृत्यगत् समताक ।
मैत्री भेलि कुलीनसों फलथिक कल्पलताक ॥ २ ॥
शूर स्थिर क्रिय सदृशहो जेधर्म्मज्ञ महान् ॥
जनि सों प्रेम अपूर्व्वसुख बनल बहल सम्मान ॥ ३

शास्तानान्यपतिर्बभूव तदनु श्रीगाङ्गदेवोनृप
स्तत्सूनु र्न्नरसिंहदेवनृपतिः श्रीरामसिंहस्ततः ।
तत्सूनुःखलु शक्रसिंहविजयी भूपालवन्द्यस्ततो
यत्र श्रीहरिसिंहदेवनृपतिः *कार्णाटचूडामणिः । २ ॥

* आर्य्यैर्श्चे मीश्वरकवेः दण्डकौशिकनाटके आदिष्टोऽस्मि श्रीमहीपालदेवेन इसे मांपुराविदः प्रशस्तिगाथामुदाहरन्ति ॥ यस्संहृत्यप्रकृतिगहना मार्य्यचाणक्यनीतिं हत्वान न्दान् कुसुमगरं चन्द्रगुप्तोजिगाय । कार्णाटत्वंध्रुव मुपगतानद्यतानेवहन्तुंदोर्दर्पाढ्य स्सपुन रभव छ्रीमहीपालदेवः ॥ अयमासीत् कान्यकुब्जे * कार्णाटः परमारःप्रसिद्ध पवार इति पृथ्वीराजप्रशानस ॥

तदनन्तर मुभयद्गिुणचारिण सौहृदे समुत्पन्ने सराजा वामदेवो हरिसिंहदेवं लिखनद्वारायायाचे । यन्मह्यं सन्देशत्वेन द्वौ पुरुषौ प्रहेतव्यौ एकस्सुधी द्वितीयो मूर्ख इति तदालोक्य लिखनं पठन् स राजा चिन्तयामास यन्मित्रवचन मपरिहार्य्यं तदितः कंसुधियं दत्त्वा मूर्खं प्रहेष्यामीति चिन्ताकुलितं राजानं दृष्ट्वा ॥ मन्त्रिराजउवाच । देव" किमिति चिन्ताकुलितोऽसि ॥ राजोवाच ॥ मित्रनियोगानिर्व्वाहः परमलज्जास्थानम् । ततस्तचकस्सुधीः कोवा मूर्खः प्रहेतव्य इति चिन्तयामि । मन्त्रिराजउवाच ॥ न कश्चित्प्रहेतव्यः । राजोवाच । आः शान्तं पापं मित्रप्रार्थनाभङ्गः । मन्त्रिराजउवाच ॥ मित्राभ्यर्थनायां सिद्धिरेवभविष्यति । यतो वामदेवो महाराजस्तस्य देवगिरिराज्ये किं वस्तु दुर्लभम् । कति पण्डिताः कति मूर्खा न सन्ति तदितः प्रहितेन पण्डितेन मूर्खेण वा किन्तस्य प्रयोजनम् । ततस्तर्कयामि । स राजा परमविदग्धः कुतू

भाषानुवाद ।

तदनन्तर परस्पर विशेषसुहृदता वाढलि दूनू राजा कां ॥ एकसमय वामदेव राजाहरिसिंह देव राजाका लिखनद्वारा याचना कयल । हमरा सन्देशरूप दुइ पुरुष पठाओल जाय एकपण्डित दोसर मूर्खसे पत्र लिखल हरिसिंह देव पढिचिन्ता करयितभेला जे मित्रवचन अवश्य कर्तव्य एतयसों कोन पण्डित कोन मूर्ख पठाय देवैनि। ईचिन्ता कुलित राजाका देखि मंत्रिराजकहयित भेला हे महाराज कियक चिन्ताकुलित अपनें ॥

राजाकहल" मित्रक प्रार्थित सन्देस नहि पठाएब से परमलज्जा स्थान थिक । ततयकें पण्डितके मूर्ख मित्र सन्देशार्थ पठायब तकरचिन्तामें छी" "मन्त्रिराजकहल" नहिकक रङ्ग पठावक 'राजाकहल" आः शान्तपाप मित्रप्रार्थनाभङ्गमे' 'मन्तिराजकहल" मित्रप्रार्थना सिद्धिएहोइति गय । हेतु वामदेव महाराज तनिक देवगिरि राज्यमे की वस्तुदुर्लभ बातें कपण्डित कतेक मूर्खकी नहिअछि । जे एतयसौं पठाओल पण्डितसौं वामूर्खसौं इ निराजा का की प्रयोजन ततय हमतर्क करैछी से राजा परम पण्डितओ कुतूहली तेहन

श्लोक ॥

बाणाद्विवाङ्कशशिसम्मितशाकवर्षे पौषस्य शुक्लदशमीक्षितिसूनुवारे । त्यक्त्वा सपट्टनपुरीं हरिसिंहदेवो दुर्दैववेशितपथोगिरि माविवेश ॥ २ हरिसिंहदेवस्यान्तसमयश्लोकोयम् ॥

१ अयं देवादित्यपुत्रो वीरेश्वरभ्राताकनीयान् वाजसनेयिकश्राद्धपद्धतिकर्त्तुः रामदत्तस्य पिता आसीत् विद्यापतेः प्रपितामहसोदरश्च ।

छलोय तथाविधपुरुषद्वय प्रार्थना व्याजेन भवतो मन्त्रिणां परीक्षते यदहम्मूर्खम्पण्डितञ्च परिचिनोमि नवेति । राजोवाच ॥ ततः किम्बिधातुमुचितम् मन्त्रीब्रूते । देव इद मुत्तरं लिखितव्यं यत्सुधीरत्रराज्ये नास्ति नवा भवतो राज्ये सयत्नेन स वाराणस्या मन्यत्र वा पुण्यतीर्थे क्वाप्यनुसन्धातव्यः । यतोबुद्धेः फल मात्महितं तदस्मिन् संसारव्यवहारे बुद्धिमता किमर्थं स्थातव्यंबुद्धिमान् क्वापि निर्ज्जने गिरिकन्दरे समाधिस्थो भविता मूर्खस्तु सर्व्वत्राऽपि सुलभः । किन्त्वस्यावस्तुनःप्रस्तापनेन चिह्नन्तु तस्य परिचयार्थं लिख्यतएव ॥

तद्यथा । समानौ हस्तपादौद्वौ दैवाधीनेष वैभवे ।
यो निन्दां विन्दते लोकात्स मूर्खः परिकीर्त्तितः ॥ ४

अपिच ॥ लब्ध्वाऽपि मानुषं जन्म पुण्यं येन न सञ्चितम्
नार्ज्जितञ्च यशश्शुद्धं स मूर्ख इति कथ्यते ॥ ५ ॥

भाषानुवाद ॥

एव दुइ प्रर्थना छलसौं अपनेंक मन्त्रीक परीक्षा करैछथि जेहम पण्डित मूर्ख चिन्हव नहिकी । राजाकहल । तखन की कर्त्तव्य उचित ॥ मंत्रीकहल हेमहाराज एहनउत्तर लिखल जाइनि जे पण्डितएहि राज्यमें नहि नहिअपनेक राज्यमें देखि पड़ैछ से काशी वा अन्यपुण्य तीर्थमें अन्वेषण करवाओल जाय कारण बुद्धिक फल आत्महित तें एहि संसारव्यवहारमें बुद्धिमान् की प्रयोजनसौं रहताह बुद्धिमान् कतहु निर्ज्जन पर्व्वतक कन्दरामें समाधिस्थ हयताह मूर्खतौं सर्व्वत्र सुलभहें की अवस्तु पठओलासौं चिन्ह तकर परिचयार्थ लिखैछी ॥

दोहा ॥

सुन्दर करसुन्दर चरण दैव सुसम्पति पाव ।
जनिकर निन्दा लोकमें से पुन मूर्ख कहाव ॥ ४
पाओल मानुष जन्मकां पुण्य न संचितभेल ।
शुद्ध सुयश जनिकरन पुन मूर्खकोटिमे गेल ॥ ५

राजोवाच । तर्हितथा क्रीयताम् । ततो राजमन्त्रिभ्यां परामृष्य वामदेवे राज्ञि तदुत्तरं लिखितम् । तत स्तत्पत्र म्प्राप्य राजा वामदेवः परमपरितुष्टो बभूव । सभासदांमध्ये तंराजानं तञ्चमन्त्रिणं बहुश स्तुष्टाव । साधु भूपाल साधु यस्यायन्तव राजनीतिकल्लोलिनीकर्णधारो धर्म्मज्ञो मन्त्री । तथाच तत्समये कवेः कस्यचित्

श्लोकः ॥ गणेश्वरगुणग्रामं गुणिनो गणयन्तिये ।
नून मम्भोनिधेरन्तः कुम्भैराकलयन्तिते ॥ ६ ॥
लौकिके वैदिकेष्वैव यावत्कार्य्यं न विद्यता ।
तात्र देता हृशन्तस्य कुतश्चन्द्रामलयशः ॥ ७ ॥

इतिसुबुद्धिकथा ॥

भाषानुवाद ।

राजा कहल तों तेहने कद्ध । ततय राजा औ मन्त्री दुनूजन विचारि वामदेव राजा कां ताहि पत्रक उत्तर लिखल ततय ताहि पत्रक उत्तर पावि राजा वामदेव परमसंतुष्ट होइत भेलाह सभा मण्डली मध्य ताहि राजाक औ मन्त्रीक बहुत स्तुति करयितभेलाह साधु राजा साधु । जनिक ई अपनें क राज नीति नदी कर्ण धार धर्मज्ञमन्त्री ततय ताहि समयक कविवचन ॥

दोहा ॥

मन्त्रि गणेश्वर गुण सकल जेगुणि गणथि उदार ।
से समुद्र चढ नाव पर घूम बिनु उतरथि पार ॥ ६॥
लौकिक वैदिक कार्य्य मे यावत् नहि विशक्त ।
तावत एहन झनक कत विधु सम यशो महत्व ॥ ७ ॥

इतिसुबुद्धिकथा ॥

अथ प्रत्युदाहरणानि ॥

द्वौ कुबुद्धिरबुद्धिश्च सुबुद्धेर्व्यतिरेकिणौ ।
संक्षेपेण कथाद्वारा कथ्यते साम्प्रत मया ॥ १ ॥

तयोः प्रथमं कुबुद्धिकथा प्रस्तूयते ॥

सैवबुद्धिर्भवे द्यस्य तीक्ष्णाऽप्यऽपथगामिनी ।
सकुबुद्धि रिति ख्यातः पापापयशसो स्पदम् ॥ २ ॥

कुबुद्धिः परिचेतव्यः कथाद्वारा पुनः पुनः ।
तत्संसर्गपरित्याग सम्यक् परिचितेः फलम् ॥ ३ ॥

सचद्विविधः ॥

वञ्चकः पिशुन श्चैव कुबुद्धि र्द्विविधोमतः ॥
द्वावेतौ पापकर्म्माणौ जायेते मलिने कुले ॥ ४ ॥

तत्र वञ्चकः कथ्यते ॥

भषानुवाद ॥

प्रत्युदाहरणकथा ॥

दोहा ॥

होथि कुबुद्धि अबुद्धि पुन सुमतिक दुइ व्यतिरेक ।
कथा द्वार संक्षेप कहि सम्प्रति तनि अविवेक ॥ १

ताहिमे प्रथम कुबुद्धिकथाक प्रस्ताव करैछी

दोहा ॥

सैह बुद्धि जेत तीक्ष्णो हो सदा अपथमे जाय ।
अपजस पापक सेभवन नाम कुबुद्धि कहाय ॥ २ ॥
कथाद्वार परिचय करव लक्षण उक्त कुबुद्धि ॥
संसर्गक परि हरन फल धर्म्म बुद्धि हो शुद्धि ॥ ३ ॥

सेपुन दुइ प्रकारक ॥

दोहा ॥

से कुबुद्धि दुइ भेदछथि वंचक औ चुगलाह ॥
छलबल खल का मुखाचल आकुलित पापोत्साह ॥४

तत्र वंचक कहैछी

कूटकर्म्मणि यो दक्षो मृदुवाग्दारुणक्रियः ।
परवित्तापहर्त्ता च वञ्चकः स प्रकीर्त्तितः ॥ ५ ॥

आसीद्गोदावरीतीरे विशालानामनगरी तस्यां समुद्रसेनाभिधानो नाम राजा बभूव तस्य पुत्रं चन्द्रसेननामानं शुद्धहृदयं दृष्ट्वा तन्नगरवासिना वणिजा चिन्तितं । यतः ॥

शार्दूलस्य मृगा भक्ष्या नागा इव गरुत्मतः ।
असाधो साधवो भक्ष्याः श्येनस्येवेतरे खगाः ॥ ६

तदयं राजकुमारः साधुप्रकृतिर्न्निश्चितं मम सुखग्राह्यधनो भविष्यति तदेव मुपसर्प्पामीति परामृष्य स वणिक् राजकुमारं सिषेवे किम्पाफलप्राया दुर्ज्जनस्य प्रकृतिः परिणामविरसाऽप्यापाततः सुरसा भवति तया प्रकृत्या तं कुमारं सेवमानः सेवया वशन्नीतवान् ततः स च वकञ्चकश्चिन्तयामास । यदेनं केनाप्युपायेन देशान्तरं नीत्वा

भाषानुवाद ।

दोहा ।

छलमिथ्यामें दक्ष हो क्रिया कठिन मृदु वाक ।
परक धनक हर्त्ता सतत वंचक धूर्त्त महाक ॥ ५ ॥

छलि गोदावरी तीरमें विशाला नामक पुरी ताहिमें समुद्रसेन नामक राजा होइत भेलाह तनिक पुत्र चन्द्रसेन नामक शुद्ध हृदय देखि ताहि नगर वासी धनिआँ चिन्ता करयित भेल ।

दोहा ॥

केसरीक मृग भक्ष थिक गरुड़क लेहन भुजङ्ग ।
साधु असाधुक भक्ष्य छो बाजक पच्छी रङ्ग ॥६॥

ई राज कुमारकाँ शुद्ध प्रकृति जानि हमरासौँ सुखँ हिधन हरब हयताहमय ई हेतु ततहि आयरही । ई विचारि राज कुमारक सेवानिरत होइत भेलाह । दुर्ज्जनक प्रकृति अफलसदृशी परिणाम विरसा आद्य सुरसा होइ अछि तेहनि प्रकृतिसौँ कुमारक सेवाकद्ध सेवासौँ तनिकाँ वश करयित भेला ततय सेवंचक चिन्ता कयल जोँ एहि राज कुमारकाँ कोनहु उपायसौँ देशान्तरलय जाय छिनकहि हारा राजाक उत्तम रत्न लेब ततय विश्वासेँ

अन्यद्वारा राजकोषसारभूतानि हरामि । ततश्च विश्रब्धप्रस्तावे कुतूहल प्रस्तावेषु देशान्तरकथां श्रवणरमणीयांमुहुः कथयति । तत्कथाश्रवणर सिकं कुमारं विदित्वा "वणिगुवाच" । कुमारयौवराज्ये पितुर्व्वर्त्तमान स्य भवतो नित्यसुलभाभिभरैः स्त्रीभि रुपभुक्तै रेव भोग्यवस्तुभिः कुतः सुखं सुखन्तु देशान्तरे सञ्चरति यत्र प्रत्यह मदृष्टदर्शन मभक्तभोजन मननु भूतानुभवश्च जायते तथाहि ॥

नद्यः फुल्लसरोरुहा वनभुव स्फीतौषध स्सर्व्वदा
शैलाः काञ्चनरत्नचित्रकटकाः प्रोत्तुङ्गहर्म्याः पुरः ।
नाना केलिविचक्षणा युवतय श्चतुराश्च चौराहवा
दृश्यन्ते भुवि केन कोमलधिया देशान गत्वा बहून् ॥ ७ ॥

"चन्द्रसेनउवाच" । सखे महती ममोत्कण्ठाविद्यते कथं देशान्तरान् पश्यामि । "वणिगुवाच" ॥ कुमार भारलघुना गुरुमूल्यधनेन निर्व्वहति

भाषानुवाद ।

एकान्त कथाओं "कूतूहल कथा प्रस्तावमें" देशान्तरक नानाविध श्रवण रमणीयकथा सु नावथि । कथा रसिक राज कुमारकोजानि । वनियां कहल । हेराजकुमार कुमारपव स्था युवराज्यमें पिता जिवयित नित्य सुलभ वस्तुओं स्त्री उपभोगअओं वास्तव कतय सुख सुख तों देशान्तर में सम्भव सभदिन अदृष्ट वस्तु दर्शन अभुक्तभोजन विचित्र २ अ प्रत्यक्ष वस्तु प्रत्यक्ष हो इछ देखल जाय ॥

षटपदछन्द ॥

फुल्ल कमलयुत नदी वनस्थलि कति विध तरुवर ।
कांचन रत्न सुचित्र कटक बहुशोभित भूधर ॥
बड़बड़ कोठा महल युवति जन केलि विचक्षण ॥
अति सौन्दर्य्य निहारि मदन वश कौनहि तत्क्षण ॥
शूरवीर संग्राम कर देखला जाइछ नयन मुख ॥
देशान्तरनें भ्रमणबिनु कौमल मतिकी पाव सुख ॥

"चन्द्रसेनकहयितभेला । "हेमित्र" हमरा अति उत्कण्ठा अछि कोनादेशान्तरदेखब ॥ "वनियां कहल" । हेकुमार भार थोड़बहुतमूल्य धनसौं निवहय देशान्तर दर्शन सौं पुन

देशान्तरदर्शनम यदि मनः स्थिरं भवति धनं भवतो राजकुमारस्य विद्यत एव मनः परं स्थिरं क्रियतां कुमारेण । कुमार उवाच” । सखे मनः स्थैर्य्यं ताकृत मेव “ वञ्चकोब्रूते ” यदि कार्य्य मन्यगामि न भवति पर तर्कविषय श्चन भवति तदा निर्व्वहति कार्य्यम् “कुमार उवाच” न तर्क्क नीय क्कुनापि ततस्तथा देशान्तरसाभिलाषं कुमारं तथाविधधनसमेत माखेटव्याजेन नीत्वा चलितः सर्व्वाणक्। कियद्दूरात्तेनैनं पराहृत्यवराश्वा रूढौ द्वावेतौ काञ्चिद्दिश मुद्दिश्य जग्मतुः। ततो दूरगमनपरिश्रान्तौ क्षुत्पिपासापराभूतौ क्वचिदरण्यजलाश्रयसन्निधाने महावृक्ष मेकं दद्दृशतुः। तस्य छायायां द्वावपि तुरङ्गा दवतेरतुः। कुमारस्तु कृतजलपानः परमसुखी छाया मासाद्य तृणशय्यायां निद्राणो बभूव त न्निद्राणं दृष्ट्वा तेन वञ्चकेन चिन्तितं यन्मम कृत्यस्याऽय मवसरः ततः पादसंवाहनप्रवी णेन तेन दुरात्मना कुमारस्य निद्रा निरूपिता तञ्च गाढनिद्रं विदित्वा लताभिर्व्वबन्ध । तदनन्तरं लतावद्धसर्व्वगात्रस्य तस्य हृदय मारुह्य शस्त्र

भाषानुवाद ।

मन स्थिरहो। अपनें राजकुमारकाँ धन अछए परंच मन स्थिरकयल जाय कुमार। कुमार कहल” अयोमित्र” मनःस्थिरतरपविविअछि। वंचककहल । जौं कार्य्यअनका ओतयनहि जाय आनकेंपो पुनतर्क्क । नहिकय अकथि तखननिवहयकार्य्य ॥ कुमारकहल। नहिकेओ। तर्क्क कय अकताह ततय तेहन देशान्तर देखकअभिलाष युक्त कुमार तेहन तेहन धन समेत सिकारक छलसौं लय चललाह सेवनिया॥ कतोदूरसैन्यत्यागि ओ छवोटक पृष्ठ आरूढ राज कुमारओ वनियाँ ठक दोनों दिशा उद्देश कय जायित भेलाह ततय दूरग मनसौं परिश्रान्त क्षुधा पिपासासौं पराभूत कोनोवनजलाशयनिकट महावृक्षएक देख यित भेलाह ताहि छाया विषय राजकुमार ओ वनिक बालक वंचक घोड़ापर सौं उतर यित भेलाह कुमार पुन जल पिबि परमसुखी छाया पाबि तृण शय्यापर शयन करयित भेलाह तनिकाँ निद्रित देखि सेवंचक चिन्ताकरयितभेल जे हमर कर्त्तव्यक ओहअवसर ततय चरण संदेवन द्वारा सेदुरात्मा कुमारक निद्रा जानल ॥

तनि कुमारक गाढ निद्राजानि आनि २ लतीसौं तनिकाँ बांधल तदुत्तर बांधल अवयवीर तनि कुमारक छातीपर चढि अस्त्रआनि हूनू आँखिके फोड़ि देश यावत् कुमार

मादाय चक्षुषी स्फोटितवान् यावत्कुमारः सखे त्राहीति वदति तावद
सौ कृतकर्म्मा धनंतुरगौ नीत्वा पलायितः । कुमारश्च तत्रारण्ये कृतार्त्त
नादो करांद कदंश्च चक्षुर्वेदनया निर्दयं निःक्षिप्तहस्तपाद त्रुटितबन्धो
बभूव स परिश्रान्तो निस्सत्वो निष्क्रियश्च भूमौ निपपात तत्र च वृक्षे कश्चि
द्वृद्धशुकोवसति तस्य द्वौ पुत्रौ महाशुकौ सञ्चरणासामर्थ्यस्य प्रत्यह मा
हार मानीय प्रयच्छतः । तदा तौ वृद्धशुकं पितरं भोजयित्वा कथयामा
सतुः । पितरावाभ्यां नर्म्मदातीरे महदपूर्व्वं कष्टस्थानं दृष्टम् ॥ वृद्धशु
कउवाच ॥ किन्तदपूर्व्वं किम्वा कष्टस्थानन्त्वदृष्टम् ॥ महाशुकौकथयतः ॥
यत्रच यूथिकापुरनगरे नीलरथनाम्नो भूपालस्यैक एव पुत्रः चित्ररथ
नामधेय स चाऽन्धोवैद्यजनसेव्यमानोऽप्यन्धतान्न मुञ्चति । तेन रात्रौ नि
र्द्दीपं गृह मिव तद्राज्यं महत्कष्टस्थान मावाभ्यान्दृष्टम् । वृद्धशुकवाच ।
पुत्रौ नष्टचक्षुर्ब्बलाय भेषजं विद्यते किन्तु भिषजो भेषजन्न जानन्ति
तावूचतुः ॥ किन्तद्भेषजं । वृद्धशुकः कथयति ॥ एतस्यैव तरोः कुसुमेन

भाषानुवाद ॥

कहथि आहि २ हेमित्र आहि २ तावत वनिआं वंचक कृत कर्म्मा धन ओ दूनू अश्व लय
पड़ायित भेल । कुमार पुन ताहि जङ्गलमें आर्त्तनाद करयित कनइत नेत्र वेदना सों
निर्दय हस्तपाद कनिः क्षेपणसों मुक्त बन्धन होयित भेलाह सेपरिश्रान्त निष्क्रिय सञ्चार
रहित भूमिमें खसलाह । ततय पुन वृक्षपर वृद्धशुक रहथि तनिकां दुइ बालक विशाल
विशाल । चलयिक सामर्थ्य रहित पिताकां सभदिन आहार आनि २ दैल करथि ततय
तेहि समय पिताकां भोजन दय तृप्त कय दूनूजन बालक वृद्ध शुगा कें पुछयित भेलाह
हेपिता आजहम दूनूभाई नर्म्मदा तीर मै महाअपूर्व्व ओ कष्टस्थान देखल वृद्धशुगापुछ
यितभेला कौसे अपूर्व्व कौनसे कष्टस्थानदेखल । दूनूभाइ शुगाकहल । जतय यूथिकापुर
नगरमैं नीलरथ नामा राजाकां ऐकेबेटा जनिकनाम चित्ररथ सेहो पुन अन्धबहुत वैद्य
औषध कयल परंच अन्धत्व घयले रहलतैं रात्रिमैं दीप विहीन गृहसमान से राज्य महत्क
ष्टहम दुन भाइ देखल ॥ वृद्धशुगा कहयित भेला । शुनू २ पुत्र दुनूभाइ । अन्धकनेत्र हय
बाक औषध अछि किन्तु वैद्य लोकसे औषध नहिजनैछथि ॥
ओदूनू भाई पुछल की तकर औषध वृद्ध शुककहल एही वृक्षक पुष्प शुष्क कौकांचसों

शुष्केनाऽहं यावा यद्यञ्जनं क्रियते तदा नष्टचक्षु चक्षुष्मान् भवति तदाऽऽकर्ण्य सकुमारश्चिन्तयामास अहो विधिरनुकूलो दृश्यते यदिह गालापे चक्षुर्भेषजप्रस्तावना जाता भेषजमति सुलभमिदानीं तदस्य वृक्षस्य पुष्पेन चक्षुरञ्जनमाचरामि तावत् पश्चात्कुमारेण तथा कृतं ततः प्रथमाञ्जनेन चक्षुषि वेदना शान्ता द्वितीयाञ्जनेन तारा जाता तृतीयाञ्जनेन प्रकृष्टा दृष्टिर्भूता ततः परमहृष्टः कुमारश्चिन्तयामास यदिदानीं मम स्त्रीजनिता विपन्निस्तीर्णा अग्रे किं विधेयमस्ति अनया दुर्दशया यदि पुनर्गृहं गम्यते तदान्येषामुपहासस्थानं आत्मनः कार्पण्यं कार्पण्यन्तु मरणादपि निन्दितन्तदितो गृहन्न यास्यामि वरञ्चलब्धानुभावमिदमेव भेषजन्नीत्वा यूथिकापुरंन यास्यामि भेषजन्नीत्वा सकुमारः पन्थानं पृच्छन् कियतापि कालेन यूथिकापुरं जगाम नीलरथस्य दर्शनन्विधाय तस्य पुत्रं चित्ररथं चक्षुष्मन्तञ्चकार नीलरथस्तु परितुष्टस्सर्वं पप्रच्छ तस्य कथया गुणेन शीलेनच तदीयकुलं ज्ञात्वा चित्ररथ

भाषानुवाद।

जौं अञ्जन करैतौं आन्धर आखिगरहो सेअकनाय कुमार चिन्ताकरयित भेलाह आः विधाता अनुकूल देखैछो जैं पक्षि वचनमें नेत्र औषध प्रस्तावना भेलि औषध सेहो अतिसुलभ एखन तैं एहि गाछक फुलसौं आंखिमें आँजन करी पश्चात कुमार तेहने कयल ततय प्रथम अञ्जनमें नेत्र व्यथा सभटा निवृत्ति द्वितीय वार अञ्जनसौं नेत्र पुतली भेलि तृतीय वार अञ्जनतः उत्तमदृष्टि भेलि ततयपरम हर्षित राजकुमार विचारल जो एखन पर्यन्त मे स्त्रीक विपति छुटलि अतः पर कौकर्त्तव्यअछि एहि दुर्दशा सौं जौं पुन गृह जाएव तौं इतर लोकक उपहासक घर अपन कृपणता कृपणता मरणहु सौं निन्दिताथिकि तें एहिस्थलसौं गृह नहिजाएव उत्तम पद्मपुन प्रमाणिक अेहु औषधलय यूथिकापुरमें जायव औषधलय से कुमार वाट पुछैत कतोक दिनें यूथिका पुर जायित भेलाह नील रथ राजाक दर्शन कय तनिक पुत्रका नेत्रवान करयितभेला नीलरथ पुन सन्तुष्टभेल कुमारकां सभ वृत्तान्त पुछयित भेलथिनि" तनिक कथासौं गुणसौं शीलसौं पुन तनिक कुल जानि चित्ररथक कोटि वहिनि चित्रसेना नामकि अपन कन्याकां विवाह

कनीयसीं चित्रसेनानाम्नीं दुहितरं विवाहविधिना चतुर्थभागराज्य समेतां तस्मै ददौ ततः प्रभृति चन्द्रसेनः चन्द्राननया चित्रसेनया प्रियया सह निष्कण्टकराज्यसुख मनुभवति एकदा कस्मिंस्तु उत्साहसमये चन्द्र सेनः राज्ञो नीलरथस्य श्वशुरस्यागारं गच्छन् कस्मात्पथि तं वञ्चकनामानं वणिज मागच्छन्तं ददर्श दृष्ट्वा च तुरगा दवततार त मालिङ्गयितुं । वञ्चक स्तुतं परिचित्य कथमद्याऽपि सएव कुमार इति पलायमानो बभूव पला यमानन्तु पदातिभि रानीय कुमारस्तं वणिज मालिङ्ग्य पप्रच्छ मित्र कुश लं वणिजा किमपि न भाषितम् कुमारस्तु मित्रलाभहृष्टो राजकुलगमनं परित्यज्य तेन वणिजा सह निज मागार मागत्य रहस्युपविष्टः कुमार उवाच । मित्र वार्त्तां कथय तथाविधलब्धधनोऽपिकथ मित्थं दुरवस्थोऽसि वणिगुवाच । स्वकर्म्म परिणामेन कुमारउवाच । मित्र विस्तर तस्तत्क र्म्म कथय कथं दुर्द्दशोऽसि वणिगुवाच । कुमार वणिक् स्वभावलुब्धस्ते न भवदीयेन धनेन वाणिज्यं वहित्र मारुह्य समुद्रपारं गतोऽस्मि तत्र बहुगुणन्धनं वाणिज्य मभवत् तस्मा दागतो मम तटान्तनिकटे समुद्रे व

भाषानुवाद ॥

विधिसौं चतुर्थभाग राज्यसमेति तनिका द्यितभेलाह'' ताहिदिनसौं चन्द्रानना चित्रसेना प्राणप्रिया सहित चतुरचित राज्य सुखानुभवी भेला'' एकसमय कोनो उत्सव विषय चन्द्र सेनराजा नीलरथ श्वशुरक गृहजाइत अकस्मात् बाटमे ताहि वंचक नामा बनिआँ कां देखल'' देखिपुन घोड़ासौं उतरलाह तनिकां मिलनार्थ'' वंचक पुन तनिकां चीन्हिकोना एहठाम सेह कुमार ईचिन्ताकरयित पड़यलाह'' परंच कुमार पदाति पुरुषद्वारा अनवाय ताहि वंचक कैं आलिङ्गितकय पुछल मित्रकुशल। बनिआँ किछु उत्तर नहिदेल'' कुमार पुन मित्रलाभ हर्षसौ राज कुल गमन त्यागि ताहि बनिआँक संग अपन गृह आवि एकान्तमे बैसल कुमार पुछल'' अयोमित्र'' वार्त्ताकहु तेहनधन पावि पुन कियक एहन दुर्दशाछो'' बनिआँकहल अपन कर्म्म परिणामसौं'' कुमारकहल आःमित्र विस्तरसं कहसै सेकर्म्मकहु कोनहेतुदुर्द्दश अछी'' बनिआँ कहल हेकुमार वणिकस्वभावलोभी तेहिअपने क धनसौं वाणिज्यार्थ नौकाचढि समुद्र पार गेलहुँ ततय बहुत गुणधन वाणिज्य भेल तकरातयसौं चलयित हमरातठान्तमे समुद्रमे नाव डुबिगेलि धन सबनष्ट भयगेल प्राण

छिन्नं निमग्नञ्च धनानि विनष्टानि प्राणावशेषोऽहमागतोऽस्मि प्राणान्मम गृह्णातु कुमारः चित्रसेन उवाच । मित्र न भेतव्यं त्वमसि मम मित्रमसि यावज्जीवं परिपालनीया हि त्वया मैत्री वित्तञ्चेन्नष्टं विनष्टन्तच्चिन्तान्न करिष्यामि तदधिकमपरन्ते वित्तं दास्यामि । वणिगुवाच ॥ कुमार नेदं प्रत्येति स्वापराधकलुषितमिदं हृदयन्ततो न ममकोऽपि त्वयि मित्रानुरूपो व्यापारः कथं पुरा प्रसीदति भवान् । चन्द्रसेन उवाच ॥ ममायत्तममैव कर्म्म भवतः कृते रहङ्कः । तथा हि ॥

भवान्धत्तां किञ्चिद्भवतु पदवी कापि भवतो
मया तु त्वन्मैत्रीप्रवणमनसा किन्न विहितम् ।
परित्यक्तं राज्यं स्वजनसहितं हन्त विपुलं
स्वकृत्ये स्वायत्ते न खलु परकृत्यप्रभुरहम् ॥ ८ ॥

एतच्च पद्यं श्रुत्वा लज्जाविदीर्णहृदयो वञ्चकः पञ्चत्वं जगाम कुमारस्तु तन्मरणदुःखेन सुतरां रुरोद रुदन्तं स्वामिनन्दृष्ट्वा चित्रसेनाऽब्रवीत् नाथ कोऽयं कस्मादागतः कस्मान्मृतः कुतो भवानित्थं करुणापरा

भाषानुवाद ॥

आब अब छिष्ट हमअयलहुँ प्राणहरण करथु कुमार" चन्द्रसेन कहल" अयो मित्र" अहाँ जनु भययुक्त होउ हमर अहाँ मित्र थिकहुँ अहाँ सँ हमर मैत्री यावज्जीव प्रतिपालनीया थिकि धन नष्ट गेल तौं गेल ताहि मैं हम चिन्ता नहि करैछी ताहुसौं दोसर धन हम देब" वणियाँ कहल" अयो कुमार" नहि प्रतीति करैछ अपन अपराध कलुषित" मन तत्य कोनो नहि अपनें विषय मित्रक अनुरूप कर्म्म कोनगत आगा प्रसन्न हयब अपनें" चन्द्रसेन कहल हमर अधीन हमर कर्म्म अहाँक कर्म्मक हमकी ॥

चौपाई ॥

जे किछु कर्म्म कयल भलमन्द । से फल भोगव अहंस्वछन्द ।
हम मैत्रीकृत कयल सुकाज । त्यागल स्वजन विपुल निजराज ॥ ७
अपन कर्म्म फल भोगत आन । भावी ककरो हटल न मान ॥
ई बुझि मित्र करु मन थीर । की की भोगत पावि शरीर ॥ ८

ई पद्य सुनि लज्जासौं विदीर्णहृदय वंचक पंचता प्राप्त भेलाह कुमार पुन हुनि वंचक मरण दुःखसौं बहुतरोदन कयल कनयित स्वामीकें चित्रसेना पुछल" अयोप्राणेश कोई कतयसौं अयलाह कोन हेतु मुइलाह कियक अपनें एहितरह करुणापराधीन कनैछी"

धीनो रोदिति। चन्द्रसेन उवाच॥ प्रिये पुरा अनेन महती महत्तरता कृता यतो धनाऽपहारकेनापि स्वायत्तिपतितोऽपि समूलघात न्नहतोक्चि चित्रसेनोवाच॥ नाथ सोऽस्य प्रमादो नतु ज्ञानपूर्व्वको व्यापारः। चन्द्र सेन उवाच॥ तथापि महानेवायं तदिती लज्जया प्राणान् परितत्याज॥ तथाहि॥

सलज्जः पुरुष श्रेष्ठः कापथेऽपि व्रजन् क्वचित्।
लज्जाहि जायते पुंसो नाऽकुलीनस्य मानसे। ८॥

तत स्स कुमारोऽस्य वणिजः तत्सजातीयद्वारा संस्कार मौर्द्ध्वदेहिक ञ्च कारितवान् वञ्चक स्तथापि निजव्यापारफल मैहिक मयशः पार लौकिकञ्च नरकमाससाद॥ इति वञ्चककथा॥

अथ पिशुनकथा।

तद्यथा। उपकर्त्तु रपिद्वेषी निर्द्दोषेऽप्यपराधकृत्। सापराधोऽपि निःशङ्कः पिशुनो जगदप्रियः॥१॥ आसीत्कुमुदपुर न्नाम नगरं तत्र राज

भषानुवाद।

चित्रसेनकहल "यथि प्रिया" पूर्व्वहि हमर महाउपकार कयल हेतु जेओ धन हरल कर्त्ताक अधीन पड़लहु तथापि समूल घात नहि कयलनि" चित्रसेना कहल" नाथहि हिनकप्रमाद नहि ज्ञानपूर्व्वक व्यापार "चन्द्रसेन कहल" तथाऽपि महान थिकथि जै एतय लज्जासों प्राण त्यागकयल॥

दोहा।

पुरुष श्रेष्ठ सलज्जहो अपथ कर्म्मजों प्राप्त।
सेलज्जा अकुलीनकां मनमें नहि हो व्याप्त॥८॥

ततय कुमार ताहि वनिआँक तज्जाति द्वारासंस्कार ओ उर्द्ध दैहिक कर्म्म करवाय देल वंचक तथापि अपन व्यापारसों एहिलोक में अजस पारलौकिकक पुन नरक जाइत भेलाह इतिवंचक कथा॥

अथपिशुन कथा॥

चौपाई॥

निर्दोषहु में कर अपराध उपकारिकभल काजक बाध।
सापराध नहि लज्जा आव विश्वक अप्रिय पिशुन कहाव॥१

सेन मन्त्रिणा प्रत्यवेक्षमाणः चन्द्रगुप्तो नाम राजा बभूव तेन राज्ञा राजन्वति तस्मिन्राज्ये ब्राह्मणदम्पती प्रत्यूषतुः तयो रेकः पुत्रो जातः सच पित्युरुपरते पोषणासामर्थ्यान्मात्राऽपि परिहृतः शिशुरनाथः परिपतितः सच सहवासिना वणिजा सोमदत्तेन दृष्टः दृष्ट्वाच करुणया तस्मा दानीय स्वकीयधनेन पोषितः ब्राह्मणद्वारा संस्कृतः कायस्थद्वारा पाठितश्च। एकदा कायस्थगृहे तन्दृष्ट्वा केनाऽपि क्षपणकेन पद्य मिदं पपाठ।

हीन द्विजकुलेजातो वणिगन्नेन वर्द्धितः।

लब्धविद्यश्च कायस्था त्क्षुद्रबुद्धि र्भविष्यति॥२।

तदारभ्य तं सर्व्वे क्षुद्रबुद्धि मेव वदन्ति तदनन्तरं तेन वणिजा ब्राह्मणः प्रत्युपकारवासनया राजसन्निधाने धृतः राजाच तेन ब्राह्मणेनाऽऽराध्य प्रसादित स्तावत् स वणिकस्वकीयधनेन तं ब्राह्मणं पुपोष पश्चात् प्रसन्ने राजनि लब्धधने ब्राह्मणे सवणिगुदासीनो बभूव वणिज मुदासी

भाषानुवाद।

छल कुसुमपुर नाम नगर ततय राक्षस मंत्रीसों रक्षित चन्द्रगुप्त नामक राजाछलाह ताहि राजासों प्रशस्तराजधानी ताहि राज्यमे ब्राह्मण ब्राह्मणी रहथि तनिका एकजन बालकउत्पन्न भेलथिनि पिता हुनक परलोक निवासी भेला ताहिबालकका प्रतिपालन असामर्थ्यसों माता त्यागि देलथिनि ओ बालक अनाथ पडल सेसहवासी वनिआ सोमदत्त देखल देखि करुणासों ततयसों आनि अपनधनसों पालन कयल ओ ब्राह्मण द्वारा उपनयनकारवाओल कायस्थ द्वारा विद्याभ्यास करवायोल एकसमय कायस्थगृहमे ताहि बालक कां जैनसन्यासी भकुन शास्त्र ज्ञाता देखि एक पद्यपढल॥

दोहा।

हीनद्विज कुलजन्म पुन वणिगन्नैं निर्व्वाह।

कायथसों विद्या पढल क्षुद्रबुद्धि हयताह॥२

ताहि दिनसों तनिकां सव क्षुद्रबुद्धिए कहथि किछु दिन व्यतीत से सोमदत्त वनिआं ओहिक्षुद्रबुद्धि नामक ब्राह्मण कां प्रत्युपकार प्रत्याशासों राजनिकट स्थापित कयल राजा पुन ताहि ब्राह्मण सों राजासेवित तावत ततह्न से वनिआं अपन धनसों ब्राह्मणक पोषण करथि पश्चात राजाप्रसन्न ब्राह्मण सधन भेला वनिआं उदासीन होइत भेलाह